Photo by R. Ramanujan

पुरस्कृत प्रेषक

मैं खुश !

अतिशय नवीन
और सुवासिक...
रेमि
टायिलेट
पाउडर
एम.एस.तमिलरसी

चन्दामामा

दिसम्बर १९५८

विषय-सूची

हम प्रत्येक व्यक्ति और व्यापारिक संस्था को आश्वासन देना चाहते हैं कि कलात्मक सृजन, स्पष्टतम कार्य-निपुणता, आकर्षक मुद्रण और शीघ्र वितरण हमारा ध्येय है।
*
हिन्दी, अंग्रेजी, तेलुगु, तमिल, कन्नड़, मराठी, गुजराती, मलयालम और उड़िया में छपाई का कार्य लिया जाता है।
*
दि बी. एन. के. प्रेस
(प्राइवेट) लिमिटेड
चन्दामामा बिल्डिंग्स :: मद्रास-२६
टेलिफोन :
८८८५१-२ लाइन्स

पशुपंछियों की यह छोटी-सी दुनिया

कल्कत्ता में अलीपुर के सुन्दर बगीचे में करीब सारी दुनिया के जीते-जागते जंगली जानवरों और चिड़ियों का अपूर्व संग्रह है, ये यहाँ रखे गये हैं कि लोग उन्हें देखें। इस देश में जितने चिड़ियाखाने हैं, यह उनमें सब से बड़ा और सब से सुन्दर है।

चिड़ियाखाना चार दीवारियों से घिरा और फूलती बेलों और झाड़ियों से सजा है। स्वच्छ जल से भरा तालब में सुन्दर हंस इस तरह तैरते रहते हैं मानों सफेद कागज की नावें चल रही हों। पेड़ों की चोटियों पर बैठी और पिंजड़ों में बन्द चिड़ियाँ चहचहा कर और फुदक-फुदक कर दर्शकों का स्वागत करती हैं, जब कि उधर एक कुंज की तरफ मोर अपने रंग-बिरंगे पर फैलाकर नाचना शुरू कर देता है। उस तरफ एक बच्चा चित्तेदार शान्त हिरन को चना खिला रहा है जब कि पास ही बारह-सिंघा चर रहा है। कुछ दूरी पर एक आदमी शान्त कगारू को मूंगफली दे रहा है। यकाएक पिंजड़े में बाघ दहाड़ उठता है और दूसरे पिंजड़े में सिंह चुप-चाप आराम से बैठा रहता है। इधर पानी में दरियाई हाथी चिंघाड़ उठता है और गैंडा नाले के कीचड़ में सनकर शरीर को शीतल कर रहा है। ज़ेबरा और जिराफ की, बनमानुषों और चितकबरे भालुओं की, हाथियों और ऊँटों की यह छोटी-सी दुनिया बड़ी विचित्र है। तभी तो रोज सैकड़ों आदमी यहाँ आते हैं और इन दृश्यों का आनन्द लेते हैं। इसके अलावा लोग यहाँ के हरे भरे मैदान में विहार (पिकनिक) करने आते हैं, जलपान करते हैं और चाय पीते हैं। और वे जो चाय पीते हैं वह ब्रुक बॉंड चाय होती है जो दर्शनार्थियों और विहार (पिकनिक) करने वालों की प्रिय पेय है। जी हाँ, सारे हिन्दुस्थान की तरह ही कल्कत्ता के लोग भी ब्रुक बॉंड चाय बहुत पसन्द करते हैं।

असल में जब कि चिड़ियाखाना अपने विचित्र जंगली पशुपक्षियों से दर्शकों का जी खुश कर देता है तब ब्रुक बॉंड चाय अपनी अपूर्व सुगन्ध और ताज़गी से उन्हें तरोताजा बनाती है, खुश करती है।

ब्रुक बॉंड इण्डिया प्राइवेट लिमिटेड

BD 296

सूचना

"चन्दामामा" में प्रकाशित होनेवाली बेताल की कहानियाँ आप प्रति मास पढ़ रहे हैं। इनमें कई कल्पित है। जो कहानियाँ, बेताल कहानी के रूप में दी जा सकती हैं, हम उनको देते आये हैं। अगर आप इस प्रकार की कहानियाँ जानते हों, तो हमारे पास भेजिये। यदि वे उपयोगी होंगी, तो थोड़ी बहुत रद्दो बदल के बाद हम उनको "बेताल कथा" में शीर्षक के अन्तर्गत प्रकाशित करेंगे।

—संपादक,
"चन्दामामा"

दान्तों का ह्रास रोकना

★

अच्छा

तरीका

★

आश्चर्यजनक—भोजन के बाद, लिस्टरीन से दान्त साफ़ करने से कई तरह से दान्तों का ह्रास रोका जा सकता है।

१. यह नाशक बैक्टीरिया को हटाता है।

२. यह उस परत पर हमला करता है, जहाँ बैक्टीरिया जमा होता है।

३. यह मुख के अम्लों को भी हटाता है।

हाँ....लिस्टरीन टूथ पेस्ट यह सब करता है और दान्तों को भी पूरी तरह साफ़ करता है। यह आपको स्वाभाविक रूप से मुस्कराने के लिए प्रेरित करता है। बच्चे इसकी, ताज़ी, अच्छी सुगन्ध पसन्द करते हैं।

दान्तों का ह्रास रोकिये: प्रति भोजन के बाद, ताजगी देनेवाले लिस्टरीन टूथ पेस्ट का इस्तेमाल कीजिये। यह बच्चों के लिए विशेष उपयोगी है।

यह लिस्टरीन एन्टिसेप्टिक के प्रसिद्ध निर्माताओं द्वारा बनाया गया है।

LISTERINE ANTISEPTIC

चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

समाचारों से ज्ञात होता है कि सरकार बालोपयोगी साहित्य के प्रकाशन के लिए कई योजनायें बना रही है। प्रकाशकों का सहयोग भी इस दिशा में माँगा गया है।

भारत में बालोपयोगी साहित्य काफ़ी मात्रा में प्रकाशित हो रहा है। पर यह साहित्य हमेशा उतना उच्च स्तर का नहीं होता जितना कि होना चाहिए। परिमाण भी आवश्यकता की तुलना में कम ही है। सरकार की तरफ़ से भी काफ़ी कुछ छप रहा है। विदेशों से भी बहुत कुछ साहित्य मंगाया जाता है। उसमें कुछ साहित्य ऐसा है जो कदाचित् अस्वस्थ है, जिसका आयात अनावश्यक है।

बच्चे राष्ट्र की रीढ़ हैं। निर्माण की हर योजना मूल रूप से उन पर आधारित है। इसलिए आवश्यक है कि उनके लिए स्वस्थ साहित्य का निर्माण हो, जो मनोरंजक ही नहीं उपादेय भी हो।

यह कार्य क्या स्वयं सरकार ही करे? यह विवादास्पद विषय है। यह देश का कार्य है। इसलिए देश की प्रति प्रकाशन संस्था को इस ओर ध्यान देना चाहिये।

वर्ष : १०   दिसम्बर १९५८   अंक : ४

मुख - चित्र

कार्तिक मास में, एक दिन सवेरे कृष्ण, हस्तिनापुर पाण्डवों का दूत होकर गये। दारक उनके रथ का सारथी था। उनके साथ कई हथियार लेकर कृष्ण सात्यक भी बैठे। पाण्डव उन्हें कुछ दूर तक पहुँचाने गये।

रास्ते में, कृष्ण ने वृकस्थल में पडाव किया। यह जानकर धृतराष्ट्र ने, वृकस्थल से हस्तिनापुर तक, जगह जगह कृष्ण के सम्मान की व्यवस्था की। परन्तु कृष्ण ने उस तरफ़ देखा भी नहीं, वह सीधे हस्तिनापुर गये।

कृष्ण, हस्तिनापुर पहुँचते ही, धृतराष्ट्र के दरबार में गये। वहाँ उन्होंने भीष्म, द्रोण, कृपा, आश्वत्थामा और कुछ लोगों से बातचीत की। फिर वह अपने ठहरने की जगह चले गये। उस दिन दोपहर को वह कुन्ती देवी को देखने गये। कुन्ती देवी अपने पुत्रों की मुसीबतों के बारे में सुनकर रोई। कृष्ण ने उसको ढ़ाढ़स बँधाया और आश्वासन दिया कि पाण्डवों के भी अच्छे दिन आयेंगे।

कुन्ती के घर से कृष्ण दुर्योधन के दरबार में गये। दुर्योधन ने कृष्ण का यथोचित आदर किया। उसने, उनको भोजन के लिए निमन्त्रित किया। परन्तु कृष्ण न माने। उन्होंने, अपने निवासस्थल पर ही भोजन किया। वहीं वह सोये।

अगले दिन, नित्यकृत्य से निवृत्त होकर, कृष्ण कौरवों की सभा में गये। सभा में सब मुख्य व्यक्ति उपस्थित थे। कृष्ण को उचित आसन दिया गया। उन्होंने धृतराष्ट्र से कहा—"तुम बड़े चक्रवर्ती हो। अगर तुमने पाण्डवों को भी साथ मिला लिया, तो देवता भी तुम्हें न मात कर सकेंगे। अगर यह न हुआ और युद्ध हुआ तो यहाँ उपस्थित राजा सब मारे जायेंगे।"

धृतराष्ट्र और भीष्म ने भी दुर्योधन को समझाया। सब सुनकर दुर्योधन ने कहा—"मैं पाण्डवों को सूई भर भूमि भी न दूँगा।" यह कहकर, वह शकुनि और दुश्शासन के साथ सभा से उठकर चला गया।

काकोलूकीयं

"एक सिंह था भूखा वन में
मिला नहीं था उसे शिकार,
इधर उधर वह भटका दिन भर
फिर छाया निशि का अँधियार ।

घूमघामकर जा पहुँचा वह
आखिर एक गुफ़ा के द्वार,
उसमें एक रहा करता था
चतुर बहुत ही कोई सियार ।

नहीं गुफ़ा में था उस क्षण वह
गया खोजने था आहार,
सिंह घुसा झट उसमें लेकिन
भरी नहीं उसने हुंकार ।

इस आशा में बैठ गया वह
होकरके बिलकुल चुपचाप,
आएगा गर कोई प्राणी
होगा मेरा भोजन आप ।

लौटा जब कुछ देर बाद ही
घूम-घामकर वहाँ सियार,
सिंह के पग-चिन्ह देखकर
हुआ तुरत ही वह हुशियार ।

सिंह गुफ़ा के भीतर ही है
यह सोच लगायी झट आवाज—
'अरी गुफ़ा तू नहीं बोलती
मुझे देखकर भी क्यों आज?

नहीं अगर तू बोलेगी तो
गुफ़ा दूसरी लूंगा खोज,
आज मौन है क्यों? पहले तो
बोला करती थी तू रोज़!'

मेरे डर से नहीं बोलती
भीत गुफ़ा कुछ भी है आज,—
यह सोच सिंह ने 'आओ' कह
दी अन्दर से ही आवाज़ ।

सियार यह सुनकर जल्दी ही
भागा लेकर अपनी जान,
चालाकी से भेद जानकर
रक्षित कर पाया निज प्राण ।"

श्री "भारतीभक्त"

कथा सुना यह रक्ताक्ष बोला—
"अब मेरा है यही विचार,
किसी दूसरे पर्वत पर जा
वास करूँगा सपरिवार।"

यह कहकर वह गया वहाँ से
बहुत भरे निज मन में रोष,
स्थिरजीवि के मन में लेकिन
बढ़ा बहुत ही तब संतोष।

सूखी लकड़ी एक-एककर
स्थिरजीवि लाता हर रोज,
'क्यों लाता है?' उल्लू-दल ने
नहीं कभी इसकी की खोज।

फिर तो सब कौओं ने आकर
लगा अचानक दी जब आग,
जले उसी में उल्लू सारे
नहीं सका कोई भी भाग।

मेघवर्ण से स्थिरजीवि ने
कहा यही तब पुलकित-गात—
"बुद्धि जहाँ हो वहाँ न चलती
राजन, और किसी की बात।

बूढ़ा नाग लगा क्षुधा से
था जब तजने अपना प्राण,
जोर बुद्धि का तब दिखला वह
कर पाया था अपना त्राण।

मेंढक वे सब महामूर्ख थे
हुए नाग पर सभी सवार,
बातों में ही फँसा नाग ने
एक-एक को लिया डकार।

देख दूसरे चकित नाग को
उसने कही कथा तत्काल—
'एक ब्राह्मण की पत्नी थी
सुन्दर लेकिन बड़ी छिनाल।

पति को रूखा-सूखा देती
और जार को नित पकवान,
एक दिवस जब पति ने पूछा—
'कहाँ लिये जाती पकवान?'

बोली वह झट—'यह सब तो है
देवी-पूजन का सामान।'
बाद निकट मन्दिर के जाकर
करने लगी नदी में स्नान।

शंकित पति भी छिपकर आया
दुबक रहा देवी की ओट,
पत्नी आयी पूजन करने
फड़क उठे उसके तब ओठ—

'देवी मैया, ऐसा कर दो
पति मेरा अंधा हो जाय!'
'होगा वैसा यदि तू उसको
घी के नित पकवान खिलाय।'

छिपकर बैठे पति के स्वर को
देवी का ही स्वर वह मान,
लगी खिलाने पति को प्रति दिन
रोज नये घी के पकवान।

झूठ-मूठ ही अंधा बन तब
पति ने भेद लिया सब जान,
और बाद में लेकर बदला
पूरे उसने निज अरमान।

इसी तरह हे राजन, मैंने
छल उल्लू-दल का विश्वास,
सुखी किया है आज आपको
हुआ वैरियों का अब नाश!"

['काकोलूकीयम्' समाप्त]
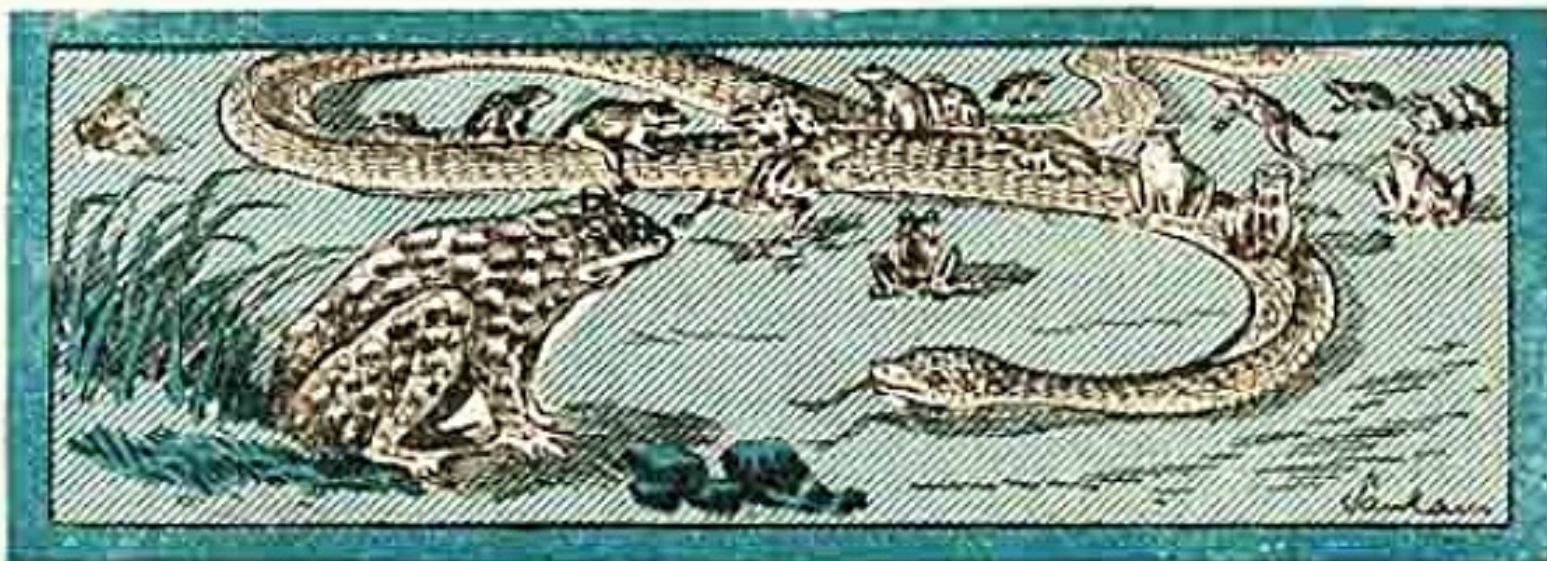
नजरुद्दीन अवन्ती

चीन में नजुरुद्दीन अवन्ती नाम का कोई हँसोड़ था। उसकी कई हास्य कथाएँ हैं।

एक दिन रात को श्मशान के पास से वह आ रहा था। उसके पीछे कुछ आदमी घोड़े पर सवार होकर आ रहे थे। अवन्ती को सन्देह हुआ कि वे चोर थे। वह एक कब्र में छुप गया। घुड़सवारों को भी उसे छुपता देखकर सन्देह हुआ। इसलिये उन्होंने उसके पास आकर पूछा—"तुम कौन हो ! अवन्ती ने कब्र में से सिर बाहर निकालकर कहा—मैं मरा हुआ हूँ। मुझे कब्र में गाड़ दिया गया है।"

"इस आधी रात के समय मरे हुओं को बाहर निकलने का क्या काम है ?" घुड़सवारों ने पूछा। "ठंडी हवा के लिए आया हूँ।" "अवन्ती ने कहा। "भूतों को भी ठंडी हवा की ज़रूरत होती है क्या ?" उन लोगों ने पूछा। "ज़रूरत नहीं है, मैंने गल्ती की है।" कहकर अवन्ती कब्र में घुस गया।

एक और दिन अवन्ती के घर चोर आया। अवन्ती चोर को देखकर एक सन्दूक में छुप गया। चोर ने सारा घर टटोला। कहीं कुछ न मिला। आखिर उसने सन्दूक खोला—"ओहो, तो तुम यहाँ हो !"

"जो तुम चाहते हो वह मेरे घर में न मिलेगा। यह सोच मैं शर्म के मारे इसमें छुप गया।" अवन्ती ने कहा।

फिर एक बार अवन्ती के घर में चोर आये। घर का सारा सामान उन्होंने उठाकर ले जाना शुरु किया। एक दो चीज़ें लेकर अवन्ती उनके पीछे चला। चोरों में से एक ने पीछे मुड़कर देखा। "अरे अवन्ती ! आधी रात के समय कहाँ निकले हो !" उसने पूछा।

रामदीन

"कुछ नहीं, मैं मकान बदलने की सोच रहा था। पर सामान भिजवाने के लिए मेरे पास गाड़ी का भाड़ा न था। आज तुम्हारी मेहरबानी से घर बदलने का मौका मिला है।" अवन्ती ने कहा।

"तुम्हें सूर्य पसन्द है या चन्द्रमा?" अवन्ती से एक मित्र ने पूछा।

"चन्दामामा" अवन्ती ने कहा।

"क्यों?" मित्र ने सवाल किया।

"देख, सूर्य तब आता है जब पहिले ही दिन में प्रकाश होता है....और चन्दामामा अन्धेरे में आकर प्यारा प्यारा प्रकाश देता है।"

"संसार के पानी में अगर आग लग जाये तो तब मछलियों का क्या होगा?" किसी ने अवन्ती से पूछा। "अगर यही हो तो क्या मछलियाँ पेड़ पर नहीं चढ़ बैठेंगी?" अवन्ती ने कहा।

"सबेरे होते ही सब इधर उधर चले जाते हैं। इसका क्या कारण है?" अवन्ती के कुछ मित्रों ने पूछा।

"अरे पगलो! यह भी नहीं जानते! अगर सब एक ही दिशा में जायें तो क्या भूमि उस तरफ़ झुक नहीं जायेगी?" अवन्ती ने कहा।
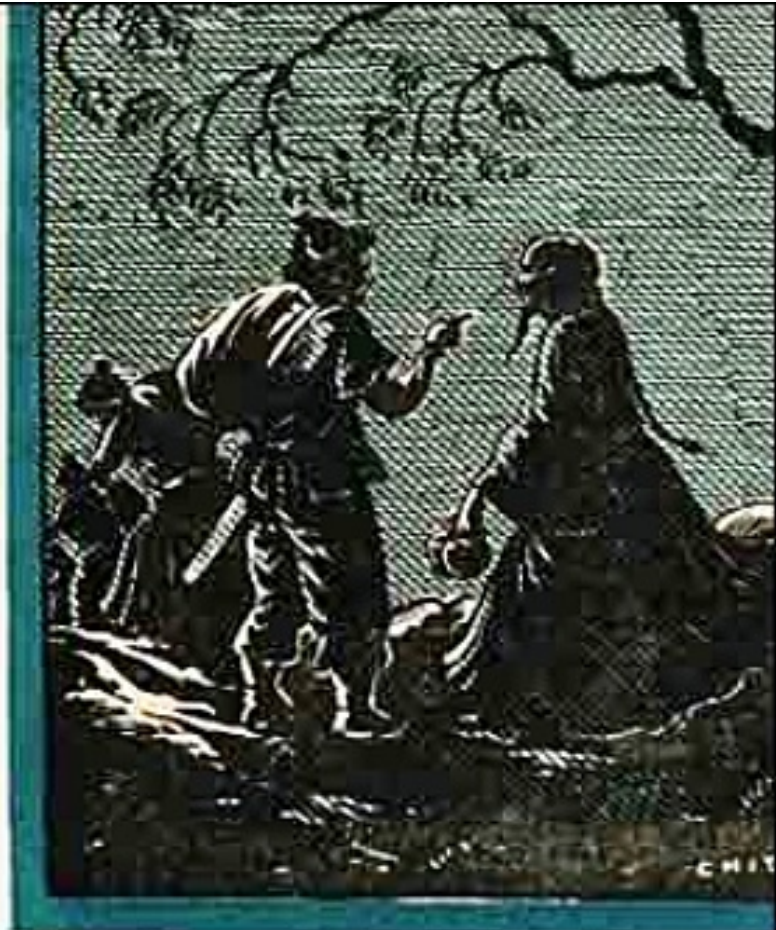
"जब शव को कब्रिस्तान ले जाते हैं तो ताबूते के पीछे रहना अच्छा है या आगे?" अवन्ती से किसी ने कहा।

"ताबूते में अगर न रहना पड़ जाये तो दोनों ही अच्छे हैं।" अवन्ती ने कहा।

एक दिन अवन्ती को एक भेड़ दिखाई दी। वह उसे घर ले गया। उसे काट कर उसने खा भी लिया, यह जानकर एक मित्र ने अवन्ती से कहा—"इस पाप के लिए तुम भगवान के सामने क्या जवाब दोगे?" "मैं कह दूँगा कि मैंने भेड़ नहीं खाई है।" अवन्ती ने कहा।

"अगर भेड़ तुम्हारे विरुद्ध गवाही देने आये तो?" मित्र ने पूछा। "भेड़ आई तो मामला सीधा है। उसे ले जाकर वापिस उसके मालिक को देदूँगा।" अवन्ती ने कहा।

एक दिन अवन्ती को पैसों की जरुरत हुई। बोझा ढोकर पैसा कमाने के उद्देश्य से अवन्ती रस्सियाँ लेकर बाजार में गया। वहाँ एक आदमी बहुत-से चीनी मिट्टी के बर्तन खरीद कर एक लकड़ी के सन्दूक में रख कुली की इन्तजार कर रहा था। क्योंकि वह मजदूरी के बदले तीन सलाह देना चाहता था इसलिए उसे कोई कुली न मिला। "पैसा तो कभी भी कमाया जा सकता है। पर अच्छी सलाह हमेशा नहीं मिलती।" यह सोच अवन्ती उस सन्दूक को ढोने के लिए तैयार हो गया।

जब दोनों मिलकर उस आदमी के घर जा रहे थे तो अवन्ती ने पूछा,—"आप क्या सलाह दे रहे हैं, जरा बताइये तो।"

"अगर कोई कहे कि खाना खाने की अपेक्षा फाके करना अच्छा है, तो विश्वास न करो।" उस आदमी ने कहा,—"अच्छी बात है।" अवन्ती ने सोचा।

कुछ दूर जाने के बाद उस आदमी ने कहा—"अगर कोई कहे की किसी सवारी पर जाने की अपेक्षा पैदल चलना अच्छा है तो उसका विश्वास न करो।" अवन्ती को यह बात भी ठीक जँची।

फिर थोड़ी दूर जाने के बाद उस आदमी ने कहा—"अगर कोई कहे कि तुमसे अधिक बुद्धू कुली कहीं है तो तुम विश्वास न करो।" तुरत अवन्ती ने सिर पर रखा सन्दूक नीचे फेंक कर कहा—"कोई कहे कि इसके अन्दर रखे बर्तन नहीं टूटे हैं तो विश्वास न करना।" यह कह कर अवन्ती ने उस आदमी से बदला ले लिया।

[५]

[पीछा करते सैनिकों से बचकर सुबाहु राजधानी पहुँचा। उसने चन्द्रवर्मा से कहा कि शत्रु धोखा देकर नगर में प्रवेश कर रहे थे। उसके बाद, चन्द्रवर्मा अपने सेनापति भीमसिंह को लेकर नगर में गया। उसने कई शत्रुओं का संहार किया। परन्तु इतने में मालूम हुआ कि सर्पकेतु और साथियों को लेकर वहाँ आ पहुँचा था। चन्द्रवर्मा अपने सैनिकों को लेकर... तुरत...किले की रक्षा के लिए गया। तब तक शत्रु उसे घेर चुके थे और वे फाटक तोड़ रहे थे। चन्द्रवर्मा अपने सैनिकों को लेकर उनका मुकाबला करने लगा। बाद में :—]

चन्द्रवर्मा के सैनिकों और सर्पकेतु के सैनिकों में दुर्ग के मुख्य द्वार के पास भीषण युद्ध हुआ। यद्यपि वे संख्या में चौगुने थे तो भी सर्पकेतु के सैनिक चन्द्रवर्मा के सैनिकों का मुकाबला न कर सके। वे पीछे हटे। पर इतने में उन्हें मालूम हुआ कि उनकी संख्या कम थी। इससे उनका हौसला बढ़ा। फिर वे अधिक जोश से लड़ने लगे। धड़ाधड़ दोनों पक्षों के सैनिक मरने लगे।

कुछ देर तक इस प्रकार युद्ध चलता रहा। बहुत कोशिश करने पर भी जब चन्द्रवर्मा दुर्ग के द्वार से अन्दर न जा सका और सोच न सका कि क्या किया जाय,

तब दूर से उसे एक और आश्विक दल के आने की आवाज़ सुनाई दी। उसकी घबराहट बढ़ी।

तुरत सुबाहु ने अपने घोड़े को चन्द्रवर्मा के घोड़े के पास ले जाकर कहा—"युवराज! हम एक बड़ी आपत्ति में फँसनेवाले हैं। हमें पीछे से खदेड़ने के लिए सर्पकेतु और आश्विकों को रणस्थल में भेज रहा है। उसके साथ एक बड़ी सेना मालूम होती है।"

चन्द्रवर्मा ने जान लिया कि उन परिस्थितियों में, उसके लिए दुर्ग में प्रवेश करना सम्भव न था। उसे लगा कि दो शत्रु-दलों के शिकंजे में से निकलना ही उस समय उसका कर्तव्य था।

सेनानी धीरमल्ल भी आनेवाली विपत्ति के बारे में चिन्तित था। सैनिकों की ऊँची आवाज़ में उसने जोर से कहा। "युवराज, जैसे भी हो यत्न से आपका बाहर निकल जाना अच्छा है। मैं, अपने सैनिकों को लेकर आपका रास्ता दिखाऊँगा।"

चन्द्रवर्मा के पास सोचने के लिए भी समय न था। शत्रु-दल, पीछे से जल्दी जल्दी चला आ रहा था, घोड़ों को दुर्ग के द्वार से पीछे मोड़ते हुए वह चिल्लाया—"सुबाहु!" और तलवार लेकर, शत्रु-सेना को चीरता भाग निकला। सुबाहु ने अपने मालिक के पीछे अपना घोड़ा भगाया। चन्द्रवर्मा और सुबाहु को भागता देखकर कुछ शत्रु सैनिकों ने उनका पीछा किया। परन्तु सेनापति धीरमल्ल ने उन्हें रोका। वह उनसे युद्ध करने लगा। यह मौका देख चन्द्रवर्मा और सुबाहु युद्ध भूमि दूर से भाग गये।

वे दोनों इस प्रकार कुछ दूर राज-मार्ग पर गये। फिर उन्होंने अपने घोड़ों को

नगर के दक्षिण द्वार की ओर दौड़ाया। अगर उनको नगर से बाहर निकलना था तो वे शायद इस दक्षिण द्वार से ही बाहर निकल सकते थे। वे जानते थे कि बाकी सब द्वार शत्रुओं के आधीन थे। उनमें से जाना असम्भव था।

चन्द्रवर्मा और सुबाहु दक्षिण द्वार के समीप थे कि उन्होंने अपने घोड़े रोक कर देखा कि कहीं वहाँ शत्रु तो नहीं हैं। वहाँ शत्रुओं की कोई बड़ी टुकड़ी न थी। कुछ लोग उस रास्ते बाहर आ जा भी रहे थे। पाँच-छः शत्रु-सैनिक द्वार के एक तरफ़ खड़े बात कर रहे थे। उनके घोड़े कुछ दूरी पर बंधे हुए थे। वहाँ कोई युद्ध नहीं हो रहा था।

"युवराज! सेनापति धीरमल्ल अभी शत्रु-सैनिकों को हमारा पीछा करने से रोक रहा होगा। परन्तु अपने इने-गिने सैनिकों को लेकर, वह शत्रुओं का बहुत देर तक सामना न कर सकेगा। इसलिए हमारा नगर से बाहर चला जाना ही अच्छा है। आइये, एक दौड़ में बाहर चले जायें।"

चन्द्रवर्मा ने स्वीकृति में सिर हिलाकर घोड़े को ऐंड़ मारी। उसी समय बात करते शत्रु-सैनिकों की नज़र उन पर पड़ी। वे चौंके। म्यानों में से तल्वार निकाल कर "होश" कहते अपने घोड़ों की ओर भागे।

"सुबाहु! हमें तुरत द्वार पार करके चले जाना चाहिये। घोड़े को बिना रोके चले जाओ। अगर ये तुम्हारी तल्वार की पहुँच में आयें तो इन शत्रुओं का शिकार करते जाना।" यह कहकर चन्द्रवर्मा ने यकायक अपना घोड़ा द्वार की ओर सरपट दौड़ाया।

इस बीच, शत्रु-सैनिकों में से तीन अपने घोड़ों के पास पहुँच गये और

उन्हें वे खोलने लगे। दो सैनिक द्वार रोके खड़े थे। "ठहरो! नहीं तो प्राण नहीं बचेंगे!" उन्होंने तलवार निकालकर चिल्लाकर कहा।

"किसके प्राण नहीं बचेंगे!"—कहते कहते तेज़ी से भागते अपने घोड़े पर से झुककर, सुबाहु ने एक सैनिक का सिर धड से अलग कर दिया। दूसरे सैनिक पर चन्द्रवर्मा ने तलवार उठाई ही थी कि वह झट झुक गया और ज़मीन पर लुढ़क गया।

इतने में शत्रु-सैनिक, घोड़ों पर चढ़कर, चन्द्रवर्मा और सुबाहु के पीछे दौड़े। चन्द्रवर्मा ने पीछे मुड़कर न देखा। वह तेज़ी से सीधे रास्ते पर हवा से बातें करता भागा जा रहा था।

चन्द्रवर्मा और पीछे सुबाहु बहुत तेज़ी से आगे जा रहे थे। उनसे कुछ दूरी पर चार शत्रु-सैनिक ललकारते हुए भागे आ रहे थे।

"युवराज! अच्छा है कि हम रुककर इन शत्रुओं का खातमा करें, नहीं तो हमारा ये पीछा न छोड़ेंगे। चलते चले आयेंगे" सुबाहु ने पीछे मुड़कर कहा।

"हम लोगों का रुकना बड़ा खतरनाक है। अब तक सर्पकेतु को मालूम हो गया होगा कि हम नगर से भाग गये हैं। वह जरूर एक बड़ी सेना लेकर हमारा पीछा करेगा। इन शत्रुओं को पीछा करने दो। वे जो पहाड़ दीख रहे हैं, वहाँ पहुँचकर हम इन लोगों की खबर लेंगे। अब हमारा इनसे लड़ाई करना अक़्लमन्दी का काम नहीं है।" चन्द्रवर्मा ने कहा।

चन्द्रवर्मा ने अभी बात खतम ही की थी कि पीछे से एक बाण सनसनाता आया और उसके दायें हाथ को खरोंचता रास्ते के एक तरफ़ गिर गया। "सुबाहु"

चन्द्रवर्मा चिल्लाया और घोड़े के गले से चिपककर लिपट गया। और घोड़े की चाल बिना धीमी किये चलता गया।

"अब तक मैं जिन्दा हूँ, युवराज!" उसने भी घोड़े के गले से चिपके चिपके पीछे की ओर मुड़कर देखा।

शत्रुओं में से एक सैनिक हाथ में दो बाण लेकर, उनकी ओर निशाना लगा रहा था, उसने घोड़े की लगाम मुख में ज़ोर से पकड़ रखी थी। इस दृश्य को देखकर सुबाहु को आश्चर्य हुआ और भय भी।

यह वह चन्द्रवर्मा से कहनेवाला था कि शत्रु-घुड़सवार के घोड़े का पैर एक पत्थर से लगा और एक तरफ हट गया। इतने में पीछे से आता घोड़ा उससे ज़ोर से टकराया। उस टकराने के कारण वह सैनिक, जिसने हाथ में बाण लिया हुआ था, ज़ोर से चिल्लाता नीचे गिर गया। उसे जिन्दा कुचलते हुए बाकी घोड़े आगे दौड़े।

सुबाहु, इतना खुश हुआ कि वह घोड़े पर सीधा तनकर बैठ गया। उसने सोचा कि इस घटना के बाद आखिक उनका पीछा करना छोड़ देंगे और अपने साथी की मदद करेंगे। परन्तु उसका अनुमान झूट निकला। शत्रु-सैनिकों ने अपने साथी के लिए पीछे मुड़कर भी न देखा। वे और तेज़ी से घोड़े भगाने लगे। यह देखकर कि उनमें किसी के पास बाण न थे, सुबाहु बड़ा खुश हुआ। उसमें नया जोश आ गया।

"युवराज! जो शत्रु-घुड़सवारों में बाण चलानेवाला था, वह अपने साथियों के घोड़ों द्वारा कुचल कर मार दिया गया है। अब हमारे पीछे तीन दुश्मन ही आ रहे हैं। उनके पास केवल तलवार ही हैं।

क्या रुककर उनको हम यमपुरी पहुँचा दें!" सुबाहु ने पूछा।

चन्द्रवर्मा ने पीछे मुड़कर देखा, तीन ही शत्रु आश्विक थे। उन तीनों का मुकाबला करना बहुत कठिन न था। परन्तु इस बीच और शत्रु वहाँ आ गये, तो उनकी हालत और भी बिगड़ जायेगी। यह सोचते हुए उसने अपना घोड़ा थोड़ा धीमे कर दिया और रास्ते के एक तरफ़ उसे रोक दिया। इतने में सुबाहु वहाँ आया और उसने अपना घोड़ा रोक दिया। उसके बाद शत्रु-सैनिक आये। वे भी अपने घोड़े रोककर आपस में धीमे धीमे बातें करने लगे।

"युवराज—लगता है—ये दुष्ट हम से मुकाबला करने के लिए कुछ हिचक रहे हैं। वे हिम्मत करके आगे न आयेंगे। हम ही उन पर हमला करें।" सुबाहु ने चन्द्रवर्मा से कहा।

चन्द्रवर्मा ने शत्रु आश्विकों की ओर देखा, और कहा—"अच्छा सुबाहु! आओ, हम इन्हें यम के पास भेजेंगे। अगर देरी की तो और शत्रु सैनिक यहाँ इनकी मदद करने आ जायेंगे।" उसने अपने घोड़े को शत्रु आश्विकों की ओर बढ़ाया।

चन्द्रवर्मा और सुबाहु को अपनी ओर आता देख, तीनों शत्रु आश्विकों ने अपने घोड़े तुरत पीछे हटाये। वे नगर की ओर तेजी से भागने लगे। चन्द्रवर्मा ने घोड़े को ऐंड़ लगाई, उसे आगे बढ़ाया परन्तु शत्रु आश्विक भी अपने घोड़ों को मार मार कर आगे भगाने लगे। रास्ते में धूल उड़ने लगी।

शत्रुओं का पीछा करते करते चन्द्रवर्मा और सुबाहु करीब करीब दो मील नगर

की ओर गये। उन्हें यकायक—नगर की ओर से आते हुए कुछ घुड़सवार दिखाई दिये। चन्द्रवर्मा ने उन्हें देखते ही अपना घोड़ा मोड़ा। उसे पीछे दौड़ाते हुए कहा—"सुबाहु—अब तो तुम्हें शत्रुओं की चाल समझ में आ गई होगी। अब हमारे भाग जाने में ही भला है। इस से पहिले कि हम इन तीनों को पकड़ सकेंगे—सारी की सारी शत्रुओं की पल्टन हमें घेर लेगी। हमारा काम तमाम कर देगी।"

ज्योंही चन्द्रवर्मा और सुबाहु ने अपने घोड़ों को पीछे भगाया, त्योंही वे तीनों शत्रु घुड़सवार उनका पीछा करने लगे। धीमे धीमे, शत्रु आश्विकों और चन्द्रवर्मा, और सुबाहु में फासला कम होता जाता था। वे पास आ रहे थे।

"युवराज—इसबार हम सचमुच बड़े खतरे में पड़ गए हैं।" सुबाहु ने हाँफते हाँफते कहा।

चन्द्रवर्मा ने कोई जवाब नहीं दिया। अपने पीछे आने के लिए उसने सुबाहु की ओर हाथ हिलाकर संकेत किया। जो उनका पीछा कर रहे थे, उनको न मालूम था कि वे किस रास्ते पर आ रहे थे। देखते देखते, वे भी रास्ते के दोनों तरफ़ की झाड़ियों को चीरते हुए पहाड़ पर चढ़ने लगे, क्योंकि चन्द्रवर्मा और सुबाहु वहाँ चढ़ रहे थे।

चन्द्रवर्मा और सुबाहु के घोड़े खूब थक गये थे। चन्द्रवर्मा जानता था कि वे उन्हें बहुत दूर न ले जा सकेंगे। उसकी नजर शत्रु आश्विकों की ओर पड़ी, उनके घोड़े भी हाँफ रहे थे। उनके मुखों से भी झाग निकल रही थी। उसकी दृष्टि पहाड़ की तराई पर गई।....कुछ....दूरी....पर....

जहाँ से वाण आ सकता था, दस बारह शत्रु सैनिक उनका पीछा करते चले आ रहे थे।

"सुबाहू....अब हमारा, इन घोड़ों पर भरोसा करके जाना अच्छा नहीं है। ये कभी भी मर सकते हैं। ये बेहद थक गये हैं। पैदल जाने में ही हमारा भला है।" कहता कहता चन्द्रवर्मा घोड़े पर से उतरा। उसी समय शत्रु सैनिक....घोड़ों से उतरकर....चन्द्रवर्मा और सुबाहू की ओर जोर से भागे।

चन्द्रवर्मा ने चारों ओर देखा। पहाड़ में एक ढलान की जगह देखकर—वहाँ जाकर, पत्थर....पेड़ों को पकड़ता पकड़ता वह नीचे उतरने लगा। सुबाहू भी उसके पीछे उसी तरह चला। वे दोनों उतरते जा रहे थे....कि दस बारह शत्रु सैनिक उस ढलान के पास आये। आखों पर हाथ रखकर वे ध्यान से देखने लगे।

उन में से एक जोर से बोला—"हमारा उनका पीछा करते जाना खतरनाक है। अगर कहीं हाथ की या पैर की पकड़ ढ़ीली हो गई—तो कहीं दूर जा गिरेंगे, यहीं खड़े होकर उन पर पत्थर लुढ़काओ।" तुरत वे बड़े बड़े पत्थर, चन्द्रवर्मा और सुबाहू की ओर लुढ़काने लगे।

तब तक—चन्द्रवर्मा और सुबाहू खड्ड की तह तक पहुँच गये थे। चन्द्रवर्मा ने—ऊपर खड़े सैनिकों को एक बार देख कर कहा—"सुबाहू, अब कोई और रास्ता नहीं है, तुम्हें तैरना आता है न!"—कहकर वह खड्ड के पास वाली नदी में कूद पड़ा। और तैरने लगा।

(अभी और है।)

सौभाग्य और दुर्भाग्य

मिश्र देश का खलीफ़ा, मोहम्मद इबनतैलन बहुत सज्जन था। उसने गद्दी पर चढ़ते ही पिता के अन्याय को दूर किया और अराजकता को शान्त किया। लोगों को सताकर उसके पिता ने जो धन इकट्ठा किया था, उससे उसने, कवियों और वीरों और फ़कीरों की सहायता की।

एक बार, खलीफ़ा मोहम्मद ने यह देखा कि उसके किस-किस कर्मचारी की तनख्वाह अधिक थी और काम कम था। और किनके पास काम अधिक था और तनख्वाह कम थी। फिर उसने जिनके पास काम कम था, उनको काम अधिक और जिनकी तनख्वाह कम थी, उनको अधिक करने की आज्ञा दी। और सबका मामला तो ठीक तय होगया पर एक बूढ़ा बाकी रह गया।

"बाबा, तुम क्या काम करते हो! तुम्हारी तनख्वाह कितनी है!" खलीफ़ा ने पूछा।

"आपके स्वर्गीय पिता ने मुझे एक पेटी देकर, उसकी रखवाली करने के लिए कहा। इससे अधिक मेरा कुछ और काम नहीं है। इसके लिए मुझे हर महीने दस दीनार दी जाती हैं।" बूढ़े ने कहा।

"इतने कम काम के लिए इतनी बड़ी तनख्वाह। उस पेटी में क्या है!" खलीफ़ा ने पूछा।

"मैं उसको चालीस साल से हिफ़ाज़त से रखे हुए हूँ। पर उसमें क्या है, यह मैं अब तक नहीं जानता।" बूढ़े ने कहा।

खलीफ़ा ने उस पेटी को मँगवाकर देखा। वह सोने की पेटी थी। उसको

सुशीला देवी

खोला। उसमें से, कोई लाल चूर्ण, एक खाल निकली जिसपर कुछ लिखा हुआ था। परन्तु वह किस भाषा में था, उसका क्या अर्थ था यह दरबार में एक भी न जान सका। उसके बारे में पूछताछ करने पर मालूम हुआ कि वह पेटी किसी हसन अब्दुला की थी और खलीफ़ा के पिता ने उसे कैद में डलवाया था।

खलीफ़ा ने आज्ञा दी कि यदि हसन अब्दुला जीवित हो तो उसे कैद से छुड़वाकर, उसके सामने हाजिर किया जाय। वह चालीस वर्ष की कैद भुगत चुका था। बूढ़ा हो चुका था। उसे खलीफ़ा के सामने लाया गया। खलीफ़ा ने पेटी उसे देते हुए कहा—"सुना है, यह आपकी है। आप इसे ले लीजिये।"

हसन अब्दुला खुशी के आँसू बहाने लगा। उसने कहा—"महाप्रभु! आपके पिता ने जिस पेटी को जबर्दस्ती मुझसे लिया था, उसे मैं इच्छापूर्वक आपको देता हूँ। स्वीकार कीजिए।" खलीफ़ा ने हसन अब्दुला से उस पेटी की कहानी कहने के लिए कहा। हसन अब्दुला ने अपनी कहानी यों सुनाई :—

कैरो नगर के सब व्यापारियों में मेरा पिता सबसे अधिक धनी था। मैं उनका इकलौता लड़का हूँ। बड़े बड़े शिक्षकों को नियुक्त करके, उन्होंने मुझे शिक्षित किया। विद्वान बनाया। मेरी एक सुन्दर लड़की से शादी भी की। मैंने उसके साथ दस वर्ष गृहस्थी भी की।

उसके बाद दुनियाँ भर की मुसीबतें एक साथ मेरे सिर पर पड़ीं। मेरा पिता प्लेग से मर गया। हमारे घर जल गये। हमारी नौकायें समुद्र में डूब गईं। मैं सब कुछ खो बैठा। भीख माँगकर जीने

की नौबत हम पर आ पड़ी। कई बार तो मुझे, मेरी स्त्री और बच्चों को फाके भी करने पड़े। उस समय, मेरी पत्नी ने अपने आखिरी कपड़े मुझे देकर कहा, इन्हें बेचकर बच्चों के लिए रोटी ले आइये।

मैं पत्नी के कपड़े लेकर जा रहा था कि ऊँट पर सवार होकर एक अरब मेरे सामने से आया। मुझे देखते ही उसने ऊँट से उतरकर पूछा—"हसन अब्दुल्ला नाम के बड़े व्यापारी के घर का रास्ता किधर है?"

"महाशय, मैं नहीं जानता उस नाम का कोई व्यक्ति कैरो शहर में है!" कहकर मैं चला गया। परन्तु उसने हाथ पकड़कर मुझे रोका, पूछा—"क्या तुम हसन अब्दुल्ला नहीं हो? अल्लाह के भेजे हुए अतिथि को इस तरह टरकाते हो!" फिर उसने मेरा आलिंगन किया। वह मेरे साथ मेरे घर आया।

मैं एक बार फिर अपनी पत्नी के कपड़े बेचने जा रहा था कि वह मुझे मिला। मुझे रोककर वह जान गया कि मैं किस काम पर जा रहा था। उसने मेरे हाथ में दस दीनार रखकर कहा—"जाओ, जो कुछ चाहिए, उसे खरीदकर ले जाओ। वह पन्द्रह दिन हमारे यहाँ अतिथि रहा और हर रोज़ मुझे दस दीनारें देता गया। सोलहवें दिन उसने यकायक मुझसे कहा—"क्या तुम मेरे लिए बिकोगे, हसन? जितना तुम माँगोगे उतना दूँगा।"

मैंने सोचा कि वह मज़ाक कर रहा था। "जो एक चोट से मर जाये उसकी कीमत हज़ार दीनार है। उससे अधिक चोटों से जो मरे, उसकी कीमत पन्द्रह सौ है, यह कुरान में लिखा हुआ है।"
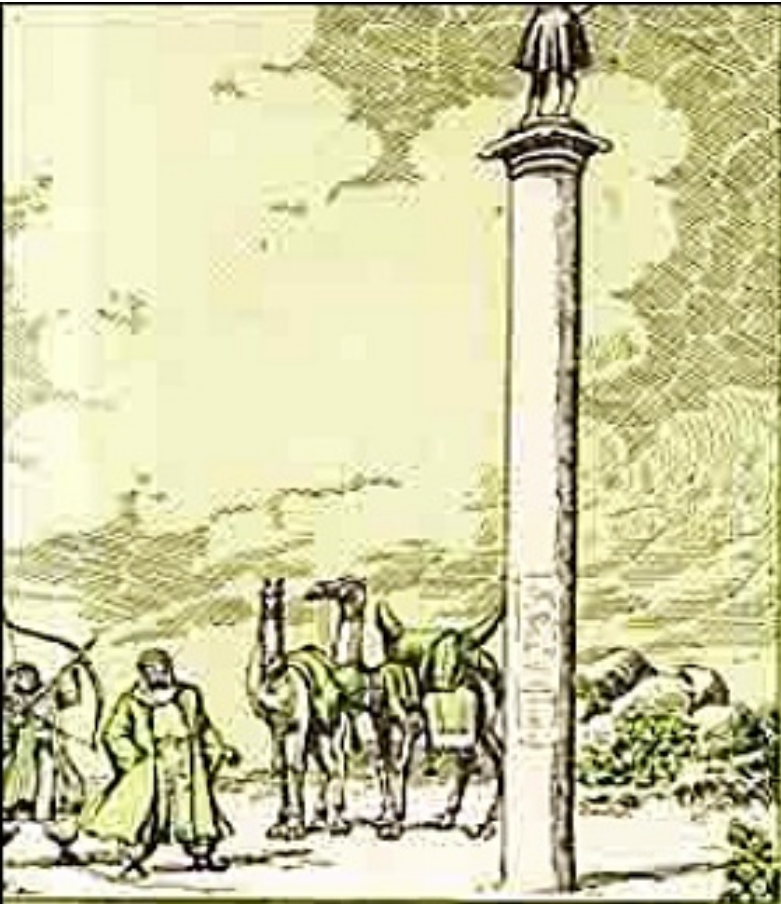
मैंने कहा। वह पन्द्रह सौ दीनार देने के लिए मान गया। तब मैं जान सका कि वह सच ही कह रहा था। यह सोचकर कि कम से कम मेरे बाल बच्चे, सुखी होंगे, मैं बिकने के लिए मान गया। उसने पन्द्रह सौ दीनार गिनकर देते हुए कहा—"मैंने तुझे सफ़र में साथ देने के लिए ही खरीदा है। तुम पर कोई आपत्ति न आयेगी।

मैंने वह धन अपने लोगों को दे दिया। उस महाशय के कथनानुसार मैं एक ऊँठ खरीदकर, सफ़र के लिए आवश्यक चीज़ें लेकर उसके साथ चल दिया। हम जल्दी ही रेगिस्तान के रास्ते दस दिन सफ़र करके ऐसी जगह पहुँचे, जो निर्जन था। ग्यारहवें दिन हम एक मैदान में पहुँचे।

उस मैदान के बीच में एक ऊँचा पत्थर का खम्भा था। उसके ऊपर ताम्बे से बनी एक युवक की मूर्ति थी। उस युवक की दायें हाथ की अंगुलियाँ खुली हुई थीं। पाँचों अंगुलियों में पाँच चाबियाँ लटक रही थीं। उनमें से एक सोने की, एक चान्दी की, एक ताम्बे की, एक लोहे की, एक राँगे की थी। क्योंकि मैं तब उन चाबियों का रहस्य न जानता था, इसलिए मुझे कष्ट झेलने पड़े।

स्तम्भ के पास पहुँचकर हम ऊँठों पर से उतरे। अरब ने धनुष से बाण ताम्बे की मूर्ति पर छोड़ा। परन्तु बाण उतना ऊँचा न जा सका। उसने मुझे धनुष देकर, मूर्ति के हाथ की अंगुलियों पर लटके चाबियों पर मारने के लिए कहा। मैंने जो बाण छोड़ा तो सोने की चाबी नीचे गिरी। मैं उसे मालिक को देने ही वाला था कि उसने उसे मुझे रखने के लिए कहा। मैं यह न जानता था कि उसके

कारण कष्ट आते थे। मैंने उसको कमर में बाँध लिया। फिर मैंने चान्दी की चाबी नीचे गिराई। मालिक ने उसको भी मुझे रखने के लिए कहा। उसके कारण दुख-दर्द आते थे।

फिर मैंने लोहे और रांगे की चाबी गिराई। अरब ने मेरे बल और निशाने की तारीफ़ की। उन दोनों चाबियों को उसने ले लिया। वे सुख और ज्ञान देते थे। मैं बाण लेकर ताम्बे की चाबी गिरानेवाला ही था कि मेरा हाथ खींचकर, उसने कहा—"अरे अभागे! क्या करने जा रहे हो?" उसके बाण खींचने के कारण, वह पैरों पर जा गिरा, मुझे चोट लगी। दर्द होने लगी। वह ही मेरे कष्टों और दुखों का आरम्भ था। ताम्बे की चाबी के कारण मृत्यु आती थी।

मेरे मालिक ने मेरे घाव पर पट्टी बाँधकर मुझे ऊँठ पर चढाया। हम तीन दिन के सफ़र के बाद फलों के बागों के इलाके में पहुँचे। मेरा घाव मुझे लगातार दर्द दे रहा था। मैं बहुत प्यासा था। लंगड़ाता लंगड़ाता पेड़ों के पास गया, एक फल को तोड़कर दान्तों से काटा। मेरे

दान्त उस फल में अड़ गये। मैं चिला भी न सका। आँखें बाहर निकल-सी आईं। मैं वहीं गिर गया।

मेरा मालिक मेरी बुरी हालत जानते ही पेड़ के नीचे गया। उसने वहाँ पड़े फलों को चुना। उनमें से एक कीड़ेवाला फल लेकर, उसके कीड़े उसने मेरे मुख के फल में रखे। उनको मेरे मुख के फल को खाने में तीन दिन लगे। तब जाकर मैं बच सका। उन तीन दिनों में, जो दर्द मुझे हुआ, उसका बयान करना मुश्किल है। मेरा मालिक मेरे साथ ही रहा। मेरे साथ

ही उसने भोजन किया। मेरे साथ ही वह सोया।

मेरा मुख ठीक हुआ और जब मैंने कुछ खाकर पानी पीने की सोची तो, हमारा खाना खतम हो गया और पानी की मशक भी खाली हो गई। मैं ज़ोर से रोया। अरब ने जैसे तैसे मुझे सान्त्वना देकर मुझसे सफ़र करवाया। हम सारा दिन भर सफ़र करके एक पहाड़ के पास पहुँचे। मेरे मालिक ने कहा कि इधर उधर की चीज़ें खाकर कोई दर्द न मोल ले बैठना। वह ही जाकर कुछ फल तोड़कर लाया। वे स्वादिष्ट थे और पौष्टिक भी। चन्द्रोदय के समय, मैं कम्बल बिछाकर सोना चाहता था कि अरब ने मुझे एक काम सौंप दिया। "तुम इस पहाड़ पर चढ़ो। और उसकी चोटी पर रात बिताओ। सूर्योदय तक पहाड़ की चोटी पर रहो। नमाज पढ़कर नीचे उतरना। भूलकर भी न सोना, समझे। सोने से तुम बीमार पड़ जाओगे।"

मैं तो बिका गुलाम था। उसकी बात कैसे सुने बगैर रहता!—इसलिये मैं मरता, जीता, हाँफता, हाँफता, पहाड की चोटी पर पहुँचा। मैं थकान के कारण, तुरत सो गया। सूर्योदय से कुछ पहिले मैं उठा—क्या देखता हूँ कि मेरा सारा शरीर फूल गया है। बहुत मुश्किल से मैं उठा। पूर्व की ओर मुड़कर, नमाज करके, मैं नीचे उतरने के लिए तैयार हुआ। क्योंकि मेरे अंग मेरे आधीन न थे, इसलिये लुढ़कता लुढ़कता, पहाड़ के नीचे गया। जगह जगह घाव हो गये।

मेरे मालिक ने मेरी तरफ़ देखा भी नहीं। उसने जमीन पर कुछ लकीरें खींची। "तुम्हारी छाया के कारण रहस्य मालूम

हो गया है। आओ, यहाँ खोजें।" मैं जोर से रोने लगा। तब जाकर उसने मेरी तरफ़ देखा। पहाड़ की चोटी पर सो जाने के कारण, वह मुझ पर गुस्सा कर रहा था, उसने चाकू लेकर मेरे जोड़ों में जोर से भोंका। खून की जगह पानी निकला। मेरा दर्द कम हो गया।

उसने जिस जगह निशान किया था वहाँ खोजने पर एक संगमरमर की समाधि निकली। उसमें, मनुष्य की हड्डियाँ और चमड़े पर कुछ लिखा मिला। अरब ने उसको पढ़ा।

"हसन, इसमें हराम नगर का रास्ता है जिसको किसी आदमी ने नहीं देखा है। हमें वहाँ ऐसी सिन्दूर गन्धक मिलेगी जो किसी लोहे को भी सोना बना देगी।"

हम पहाड़ का चक्कर लगाकर तीन दिन यात्रा करके, सामों की घाटी पहुँचे। वहाँ जहाँ नजर जाती थी वहाँ काले काले अजगर लटक रहे थे। मेरे मालिक ने मुझे धनुष बाण देकर कहा—"सींगवाले साँप को देखकर मार देना। उसका सिर और दिल लाना।" मैं प्राणों की आशा

छोड़कर उस घाटी में गया। थोड़ी देर में मुझे सींगोंवाला साँप दिखाई दिया। सौभाग्य से मैं उसको मार सका, उसका सिर और दिल निकालकर ला सका। मेरे मालिक ने मुझ से आग तैयार करवाई। उस पर एक कढ़ाई रखकर उसने, साँप का सिर और दिल गरम किया। उसमें उसने तेजाब की-सी कोई चीज़ दो बून्द डाली। फिर उसने कुछ मन्त्र पढ़े। फिर उसने कढ़ाई में तली चीज़ को, अपने कन्धों पर रगड़ने के लिए कहा। मेरे रगड़ने की देर थी कि वहाँ उसके पंख उग

आये। उसने मेरे भी पंख उगाये। वह मुझे लेकर आकाश में उड़ा।

उड़ते उड़ते हम हराम नगर पहुँचे। उस निर्जन वन में, जो श्री सम्पदा देखी, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। पर हम वहाँ से लाये केवल 'कीमिया' नाम की सिन्दूर गन्धक ही। मुझे 'कीमिया' में विश्वास न था। इसलिये रत्न, मोती वगैरह, बटोरने लगा। परन्तु मेरे मालिक को गुस्सा आ गया और उसने उन्हें दूर फेंक दिया।

फिर हम जैसे तैसे कैरो पहुँचे। न जाने क्यों सारे कष्ट मेरे सिर पर ही आये। मैं पहिले अपने घर की ओर भागा। परन्तु वहाँ कोई न था। जिनको मैं अपना कह सकता था, सब मर मरा गये थे। यह जानकर मैं बहुत दुखी हुआ। मेरा मालिक मुझे ढ़ाढ़स बंधाकर एक और मकान में ले गया। वह नील नदी के किनारे था। हमने 'कीमिया' के द्वारा बहुत सोना बनाया। हमें किसी चीज की कमी न थी। थोड़े दिनों बाद मेरा मालिक मर गया। वह अपना सब कुछ मुझे देता गया।

मेरे पास की सोने और चान्दी की, चाबियों के कारण ही मुझे इतनी मुसीबतें झेलनी पड़ी थीं, यह जानकर मैं उनको पिघला रहा था कि आपके पिता के सैनिकों ने आकर मुझे पकड़ लिया। आपके पिता ने सोना बनाने का भेद बताने के लिए कहा। मैंने नहीं बताया। आपको बताये देता हूँ। वह लाल चूर्ण ही वह भेद है। आप इसका उपयोग न कीजिये।

यह कहानी सुनकर, खलीफा मोहम्मद बहुत खुश हुआ। उसने हसन अब्दुल्ला को अपना विश्वासपात्र मित्र बनाया।

जिम्मेवारियाँ

एक मटका, मुट्ठी भर मिट्टी, सरसों का डंठल, मक्खी, सूई ने मिलकर अपना घरबार बसाना चाहा। उन्होंने घर का काम आपस में यों बाँट लिया— "मिट्टी पानी लायेगी, सरसों का डंठल गौ चरायेगी, सूई घर में झाड़ू देगी, मक्खी बैल की रखवाली करेगी, मटका घर का मुखिया होगा।

सब अपने अपने काम पर निकले। मिट्टी पानी लेने जो गई कि पानी में ही मिल गई।

गौ को भूख लगी, उसने, हाँकने वाले सरसों के डंठल को निगल लिया।

बैल ने गोबर किया तो उसकी रखवाली मक्खी उसमें फँस गई।

सूई, झाड़ू ढूँढ़ने गई, और चीटियों के खोल में जा गिरी।

मटका यह देखने के लिए कि औरों का क्या हुआ, दीवार से कूदा और टुकड़े टुकड़े हो गया।

धवलगिरी का राजा यशोधन आदर्श राजा था। प्रजा को सुख रखने के लिए वह निरन्तर प्रयत्न करता रहता। वह एक दिन, वेष बदलकर, अपनी राजधानी में घूम रहा था कि उसे एक झोपड़ी में तीन बहिनें आपस में बातचीत करती दिखाई दीं।

तीनों में बड़ी ने कहा—"मैं राजा के लिए मिठाइयाँ वगैरह, बनानेवाले से शादी करना चाहती हूँ। राजा जो कुछ खाकर छोड़ देंगे, वह हम खा सकेंगी।"

"मिठाइयाँ वगैरह से कहाँ पेट भरता है। मैं राजा के रसोइये से शादी करना चाहती हूँ।" दूसरी बहिन ने कहा।

तीसरी ने कुछ न कहा। परन्तु उसकी बहिनों ने उससे पूछा—तुम किससे शादी करना चाहती हो? आखिर उसने कहा—"मैं राजा से ही शादी करना चाहती हूँ। रत्न जैसी सन्तान चाहती हूँ।"

यह सुन राजा ने उन तीनों की इच्छायें पूरी करने की सोची। उसने अगले दिन तीनों बहिनों को बुलवाया। एक ही मुहूर्त में तीनों की शादियाँ हो गईं। परन्तु तीसरे की शादी क्योंकि राजा से होनी थी इसलिए उनका विवाह बड़े वैभव के साथ हुआ।

रानी बनने पर भी, वह अपनी बहिनों को बड़े आदर के साथ देखती। उनको कोई कमी न होने देती। परन्तु बड़ी बहिनें, छोटी बहिन का वैभव न देख सकीं। वे ईर्ष्या से जलने लगीं।

यशोधन महाराजा अपनी पत्नी को बड़े प्रेम से देखता। वह उच्च कुल में न

शान्ति निरुपम

पैदा हुई थी। फिर भी वह बड़ी उदार थी। वह उनके अनुरूप पत्नी थी।

रानी गर्भवती हुई। प्रसव के दिन आये। प्रसव के लिए उसकी बहिने आईं। रानी के एक सुन्दर लड़का पैदा हुआ। यह देख उनको और भी ईर्ष्या हुई। उन्होंने एक गमले में लड़के को रखकर, राजमहल के पासवाले नहर में छोड़ दिया और एक पिले को लाकर—रानी के पलंग पर रख दिया।

जब राजा को मालूम हुआ कि उसकी पत्नी ने एक पिले को जन्म दिया है तो उसका कलेजा थम-सा गया। परन्तु उसको पत्नी पर गुस्सा न आया।

रानी की बहिनों ने जो लड़का गमले में रखा था, वह राजा के माली को मिला। उसके कोई सन्तान नहीं थी। उसने उस लड़के का नाम, 'सुजात' रखा। वह उसे प्रेम से पालने पोसने लगा।

अगले साल रानी ने एक और लड़के को जन्म दिया। इस बार भी उसकी बहिनों ने, उसके पलंग पर एक बिल्ली रखी और उस लड़के को भी नहर में छोड़ दिया। वह भी राजा के माली को मिला।

उसने उसका नाम सुकेतु रखा। वह उसे भी प्रेम से पालने पोसने लगा।

यह देख कि रानी दो बार गर्भवती हुई और दोनों बार उसने जन्तुओं को जन्म दिया, राजा को बहुत दुख हुआ पर चूँकि रानी पर उसको बहुत प्रेम था, इसलिए उसने उसको माफ कर दिया।

तीसरी बार रानी ने लड़की को जन्म दिया। इस बार उसकी बहिनों ने, उसके पलंग पर चूहा रखकर, उस लड़की को भी नहर में छोड़ दिया। वह लड़की भी माली को मिली। वह लड़की बहुत सुन्दर

थी। उसका मुँह विकसित पुष्प के समान था। जब वह हँसती तो मोती टपकते। माली ने उसका नाम सुहासिनी रखा।

तीनों बच्चे अभी छोटे ही थे कि माली की पत्नी मर गई। उसने राजा के यहाँ नौकरी छोड़ दी। राजा ने जो कुछ धन दिया था, उससे उसने नगर के बाहर एक सुन्दर उद्यान बनाया। उसमें उसने एक बड़ी कुटिया बनायी। अपने बच्चों को देखता भालता वह बहुत दिनों तक आनन्दपूर्वक जीवित रहा। माली ने मरते समय सुजात और सुकेतु से कहा कि वे सुहासिनी की अपने प्राण के समान रक्षा करें।

भाई तो कभी कभी शिकार के लिए बाहर जाते, पर सुहासिनी कभी उद्यान से बाहर न गई। एक दिन, एक बुढ़िया ने आकर उससे कहा—"कितना सुन्दर बाग है! इन पेड़ों की साया बड़ी ठंडी है। क्यों बेटी, कुछ देर यहाँ बैठने दोगी?"

सुहासिनी उस बुढ़िया के साथ पेड़ की साया में बैठ गई। उसने उससे पूछा—"क्यों नानी, इस बाग में तुम्हें कोई कमी दिखाई देती है?"

"बातें करनेवाला पक्षी, गानेवाला पेड़, "जीवजल" अगर हो तो इस तरह का बाग संसार में कहीं और न मिलेगा!" बुढ़िया ने कहा। सुहासिनी ने, कुछ भी हो, ये चीज़ें लाने की सोची। "वे कहाँ मिलेंगी!" उसने बुढ़िया से पूछा।

"पूर्व की ओर बीस दिन घोड़े पर सवारी करके जाओ। बीसवें दिन जो पहिले पहल आदमी दिखाई दे, वह बतायेगा कि वे कहाँ हैं। परन्तु बेटी, उनको लाना आसान नहीं है।" बुढ़िया ने अपने रास्ते पर जाते हुए कहा।

भाइयों के घर आते ही उसने उनसे बुढ़िया की बात कही। सब सुनने के बाद सुजात ने कहा—"मैं कल ही उनके लिए निकल पड़ूँगा।"

वह अगले दिन ही अपने घोड़े पर सवार होकर पूर्व की ओर चल पड़ा। वह बीस दिन सफ़र करने के बाद एक पहाड़ के पास पहुँचा, जो घने जंगल में था। पहाड़ की तराई में, पेड़ के नीचे, उसे कपिल महामुनि तपस्या करता हुआ दिखाई दिया।

क्योंकि वह ही पहिले पहल उसे दिखाई दिया था, इसलिए सुजात ने उससे पूछा—

"मुनीश्वर! बात करनेवाला पक्षी, गानेवाला वृक्ष और "जीवजल" कहाँ मिलेंगे? क्या कृपया बता सकेंगे?"

"वे इस पहाड़ की चोटी पर हैं। पर जो कोई उन्हें लेने गये हैं, वापिस नहीं आये हैं, बेटा।" कपिल ने कहा।

सुजात डरा नहीं। वह पहाड़ पर चढ़ने लगा। उसे रास्ते में काले पत्थर की मनुष्यों की मूर्तियाँ दिखाई दीं। वह जान गया कि वे मूर्तियाँ नहीं थीं, पर मनुष्यों के प्रस्तर रूप थे। थोड़ी दूर जाने पर उसे लगा, जैसे उसे कोई डरा धमका रहा हो। उसने इधर उधर देखा तुरन्त वह भी एक पत्थर हो गया।

चालीस दिन बाद भी जब भाई वापिस न आया तो सुकेतु निकला। सुहासिनी ने उसे न जाने के लिए बहुत समझाया, पर उसने न सुनी। वह भी, भाई की तरह कपिल के पास गया। उसके मना करने पर वह भी पहाड़ पर चढ़ा। किसी का चिल्लाना सुन, वह भी मुड़ा और वह भी पत्थर हो गया।

जब सुहासिनी को यह पता लगा कि भाई वापिस न आयेंगे तो उसका हृदय पथरा-सा गया। कम से कम उनको लिवा लाने के लिए वह घोड़े पर सवार हो उस जगह पहुँची, जहाँ कपिल मुनि थे। उसने कपिल मुनि से पूछा—"मुनीश्वर, क्या मेरे भाई इस तरफ़ आये थे?"

"आये थे, वे अब पत्थर हो गये हैं।" कपिल ने कहा।

"स्वामी, उन्हें कैसे जिलाया जाय? उनके सिवाय मेरा और कोई नहीं है।" सुहासिनी ने कहा।

"अगर उस पहाड़ पर चढ़कर बात करनेवाला पक्षी, गानेवाला वृक्ष, "जीवजल"

तुम ला सकीं, तो तुम अपने भाइयों को जिला सकोगी? क्योंकि तुम उनके लिए न जाकर अपने भाइयों के लिए जा रही हो, इसलिए तुम्हारी विजय होगी।" कपिल ने कहा।

जब वह पहाड़ पर चढ़ रही थी तो उसे भी चिल्लाना वगैरह सुनाई दिया। परन्तु वह डरी नहीं। वह पहाड़ की चोटी पर पहुँच गई। वहाँ उसने एक पिंजरे में एक पक्षी देखा। वही बात करनेवाला पक्षी था।

उस पक्षी ने उसको गानेवाला वृक्ष और वह ताल दिखाया, जहाँ "जीव जल" था। पक्षी की सलाह पर वह गानेवाले वृक्ष की एक टहनी, "जीव जल" लेकर, पक्षी के साथ वापिस चली। वह रास्ते में हर पत्थर पर एक एक बूँद "जीव जल" छिड़कती आई। पत्थर सब राजकुमार बन गये। उनमें उसके भाई भी थे।

तीनों मिलकर अपने बाग में वापिस आये। बाग में बात करनेवाले पक्षी के आते ही, जाने कहाँ कहाँ से, गानेवाले पक्षी आकर बाग में घोंसला बनाकर रहने लगे और साल-भर गाते रहे। गानेवाले वृक्ष की टहनी को गाड़ते ही उसमें पत्ते निकले और वे गाने लगे। उसका गाना सुनने के लिए भीनी-भीनी हवा चलने लगी। "जीव जल" का एक बून्द डालते ही, बाग की सब पानी की नालियों में कल-कल करता पानी साल-भर बहता रहा।

सुहासिनी के बाग के बारे में सब आश्चर्य करने लगे। राजा के पास भी यह खबर पहुँची। जब उसको मालूम हुआ कि उसकी पत्नी ने तीसरी बार भी जन्तु

को जन्म दिया है तो उसको उसने जेल में डालवा दिया था। उसके बाद वह न जान सका कि सुख किसको कहते हैं। यह सोचकर कि उस बाग में बैठने से उसका मन कुछ हल्का होगा, वह वहाँ गया।

उस समय सुहासिनी अकेली वहाँ बैठी थी। यह जानकर कि राजा उसके अतिथि होकर आये हैं, वह घबरा गई। उसने बात करनेवाले पक्षी के पास जाकर पूछा—"पक्षी पक्षी, राजा के लिए क्या क्या पकवान बनवाये जायें।"

"तुम मोतियों से भरी मठरियाँ उन्हें दो।" पक्षी ने कहा। सुहासिनी ने वैसी मठरियाँ राजा को परोसीं। राजा ने एक मठरी को तोड़कर कहा—"यह क्या! इसमें मोतियाँ हैं। इस तरह के पकवान मैंने कहीं नहीं देखे हैं।"

"रानी के गर्भ से कुत्ते, बिल्लियाँ, या चूहों का पैदा होना कहीं देखा है!" बात करनेवाले पक्षी ने पूछा।

राजा का माथा ठनका। "मेरी पत्नी ने बच्चों को ही जन्म दिया था! वे कहाँ हैं!" उसने पक्षी से पूछा। ठीक उसी समय सुजात और सुकेतु शिकार से वापिस आयें।

"ये हैं तुम्हारे बच्चे।" बात करनेवाले पक्षी ने कहा।

राजा की आँखों से आनन्दाश्रु बहने लगे। वह अपने बच्चों को गले लगाकर घर ले गया। उसने पत्नी को कैद से छुड़वाया। उससे माफी माँगी। रानी ने अपनी बहिनों को भी क्षमा कर दिया यद्यपि उन्होंने अक्षम्य अपराध किया था।

उसके बाद, अपने बाल-बच्चों के साथ, यशोधन और उनकी पत्नी ने सुख से जीवन व्यतीत किया।

जुड़वाँ बच्चे

कांचन नगर में धनपाल नाम का एक व्यापारी रहा करता था। वह व्यापार के लिए स्वर्ण द्वीप जाता साथ अपनी पत्नी को भी ले गया। उन्हें वहाँ एक साल रहना पड़ा। उस समय धनपाल की पत्नी ने जुड़वें बच्चों को जन्म दिया। वे दोनों लड़के थे और बिलकुल एक जैसे थे। धनपाल ने अपने दोनों लड़कों का नाम माधव रखा—एक का नाम बड़ा माधव और दूसरे का छोटा माधव।

बात ऐसी हुई कि जिस दिन धनपाल की पत्नी ने जुड़वें बच्चों को जन्म दिया था, पास में एक गरीब की स्त्री ने भी जुड़वें बच्चों को जन्म दिया। वे दोनों भी लड़के थे। और दोनों बिल्कुल एक जैसे थे।

उनके गरीब पिता ने धनपाल से कहा—"बाबू, हम अपना पेट ही मुश्किल से पाल रहे हैं। मैं इन बच्चों को नहीं पाल सकता। आप अपने बच्चों के साथ इन्हें भी पालिये-पोसिये। वे आपके बच्चों की नौकरी करके जिन्दगी गुजार लेंगे।"

धनपाल ने उस गरीब को थोड़ा धन दिया। उसके बच्चों का भी पालन-पोषण किया। दोनों का उसने राम नाम रखा। एक का नाम बड़ा राम, दूसरे का छोटा राम।

इन बच्चों के पैदा होने के कुछ दिनों बाद धनपाल, एक नौका में अपनी पत्नी, दोनों माधवों और दोनों रामों को चढ़ाकर कांचन नगर के लिए रवाना हुआ। परन्तु समुद्र में तूफान चलने लगा। नौका रास्ता भटक गई। एक पहाड़ी तीर पर जा टकराई और टुकड़े टुकड़े हो गई। इस घटना के कारण धनपाल, बड़ा माधव और बड़ा राम, धनपाल की पत्नी छोटे माधव

योगेन्द्र

और छोटे राम से अलग हो गये। तीन तीन की दो टोलियाँ बन गईं। समुद्र के किनारे रहनेवाले मछुओं ने धनपाल की पत्नी, और उसके साथ के बच्चों की रक्षा की, और उनको रुद्रपुर नगर पहुँचा दिया। धनपाल को एक तमेड़ मिल गई। वह दोनों लड़कों की रक्षा करता एक किनारे पर लगा। वहाँ से कांचन नगर पहुँच गया।

अट्ठारह वर्ष बीत गये। इस बीच छोटा माधव, रुद्रपुर के राजा के यहाँ नौकरी करने लगा। युद्धों में उसने पराक्रम दिखाकर खूब कीर्ति पाई। उसने मंजरी नाम की लड़की से शादी भी कर ली। उसके नौकर, छोटे राम ने गंगा नाम की लड़की से शादी कर ली। वह भी मालिक के साथ ही रहता था। गंगा रसोई और घर का काम देखती। मंजरी की सेवा किया करती।

बड़े माधव को जब मालूम हुआ कि उसका एक भाई था, और समुद्र में तूफ़ान आने के कारण वह दूर हो गया था, वह अपने नौकर, बड़े राम को साथ लेकर अपने भाई और माता को ढूँढ़ने के लिए निकल पड़ा। वह जो गया, वापिस नहीं आया। पांच वर्ष बीत गये। धनपाल पुत्र के वियोग से दुखी रहने लगा। वह अपना व्यापार, घर, सम्पत्ति छोड़कर, लड़के को ढूँढ़ता देश विदेश घूमने लगा।

घर छोड़ने के दो साल बाद धनपाल रुद्रपुर पहुँचा। उसके उस शहर में पैर रखते ही, राज सैनिकों ने उससे पूछतलब की, और जब उन्हें मालूम हुआ कि वह कांचन नगर का था, तो वे उसे राजा के पास ले गये। क्योंकि कुछ दिनों से.... रुद्रपुर और कांचन नगर में होड़-सी चल पड़ी थी उन्होंने रुद्रपुर के कांचन नगरवासियों को भगा दिया था। कुछ को

जेल में डाल दिया था। ये सब बातें धनपाल नहीं जानता था। उसने कहा कि वह दो साल से अपने बड़े लड़के को खोज रहा था, और वह सात वर्ष से अपने छोटे भाई की खोज कर रहा है।

"कानून के अनुसार तुम्हें जेल भेजना चाहिए।—पर चूंकि तुम भलेमानस, बड़े आदमी नजर आते हो....इसलिए तुम कहीं से लाकर हजार मोहरें हमारे पास धरोहर में रखो। ऐसा करने से, तुम कैद से बच सकोगे।" यह कहकर राजा ने, धनपाल को एक सैनिक के साथ नगर में भेजा।

धनपाल, जिस दिन रुद्रपुर पहुँचा था, उसी दिन, बड़ा माधव, और बड़ा राम भी उस शहर में पहुँचे। पर उन्होंने यह न बताया कि वे कांचन नगर के रहनेवाले थे। उनको पहले ही मालूम हो गया था कि ऐसा करने से उन पर आपत्ति आ पड़ेगी। बड़े माधव को बड़ी दया आई जब उसे यह मालूम हुआ कि कांचन नगर से आये हुये किसी बड़े आदमी को राज-सैनिकों ने पकड़ लिया था। उसे न मालूम था कि वह उसका पिता ही था। फिर वह उनकी कैसे मदद करता?

उसी शहर में छोटा माधव बड़े ओहदे पर काम कर रहा था। वह आसानी से उसकी सहायता कर सकता था। परन्तु वह न अपने पिता के बारे में, न भाई के बारे में और तो और न माँ के बारे में ही कुछ जानता था क्योंकि उसे और उसके नौकर राम को और उसकी माँ को बचाने वाले मछुओं ने धन के लालच में आकर बच्चों को एक सामन्त को बेच दिया था। उस सामन्त के यहाँ ही छोटा माधव बड़ा हुआ। एक दिन राजा उसको देखकर बड़ा खुश हुआ। और

उसको उसने अपनी सेना में सरदार नियुक्त कर दिया।

बड़ा माधव और बड़ा राम ठहरने की जगह का इन्तजाम करके शहर देखने गये। थोड़ी देर घूमने के बाद बड़े माधव ने नौकर के हाथ में रुपये देकर कहा—"इसे अपने ठहरने की जगह पर दे देना और कहना कि भोजन तैयार रखें। मैं घूम घाम कर भोजन के लिए वापिस आऊँगा।"

बड़े राम के जाने के कुछ देर बाद ही बड़े माधव को राम वापिस आता दिखाई दिया। परन्तु वह आने वाला छोटा राम था। बड़े माधव को यह न मालूम था। उसने उससे पूछा—"अरे अभी वापिस आ गये? मेरे दिये हुये रुपये क्या हुये?" क्योंकि दोनों राम एक ही जैसे थे इसलिए वह उसमें कोई भेद न देख सका।

जो गलती बड़े माधव ने की थी, वही गलती छोटे राम ने भी की। उसने उस माधव को देखकर सोचा कि वह उसका मालिक ही था। उसने कहा—"मालकिन आपको भोजन के लिए जल्दी बुला रही हैं—शाक सब्जियाँ सब ठंडी हो रही हैं।"

"बन्द कर यह मजाक। मजाक करने का भी वक्त होता है? पैसे क्या हुये?" बड़े माधव ने पूछा।

"अरे, अरे, मालकिन ने, चाहे आप कहीं भी हों, कैसे भी हों, बुला लाने के लिए कहा है।" छोटे राम ने कहा।

"मालकिन कौन?" बड़े माधव ने पूछा। "आपकी पत्नी।" छोटे राम ने जवाब दिया।

बड़े माधव की अभी शादी न हुई थी। उसे वह सुनकर गुस्सा आया। "अरे पगले, यह पहिले बता कि पैसा क्या हुआ?"

"आप ही मुझसे हंसी मजाक कर रहे हैं। पहिले खाना खा लीजिये, उसके बाद मुझे फुरसत से डाँटिये।" छोटे राम ने कहा। बड़े माधव ने उसे खूब पीटा। छोटे राम ने घर भागकर मंजरी से कहा—"मालकिन! मैंने मालिक को घर आने के लिए कहा और उन्होंने मुझे खूब धुनकर भेज दिया।"

मंजरी यूँ ही बड़ी ईर्ष्यालु स्त्री थी। वह अपने सन्देहों से अपने पति, छोटे माधव से दिन रात झगड़ा मोल लेती रहती। मंजरी की मालती नाम की एक बहिन थी।

सुरक्षित था। वह राम को और डाँटने डपटनेवाला ही था कि इतने में मंजरी वहाँ आई। उसे देखकर उसने उसे अपना पति समझा। बड़े माधव से मंजरी ने कहा—"आप क्यों यों देख रहे हैं जैसे किसी और को देख रहे हो? जब शादी हुई थी तब बड़े प्रेम से रहा करते थे। वह सब प्रेम अब कहाँ गया?"

"आप मुझ से ही बातें कर रही हैं न?" बड़े माधव ने पूछा। उसने कहा कि उसने उसे पहिले कभी न देखा था। उसे रुद्रपुर आये ही दो घंटे हुये थे। परन्तु मंजरी ने उसकी एक न सुनी।—"ये ऊँटपटाँग बातें छोड़िये। सीधे मेरे साथ चले आइये।" उसने धमकी दी। माधव करता भी तो क्या करता। वह मंजरी के साथ चल पड़ा। वहाँ, मंजरी और मालती के साथ उसने भोजन किया। मंजरी ने उससे ऐसी बातें कीं, जैसे वह उसकी पत्नी हो। मालती ने उसे 'जीजा' कह कर पुकारा। माधव को लगा कि वह कोई सपना देख रहा था।

बड़े माधव के साथ आये हुये बड़े राम का भी यह ही अनुभव था—क्यों

मालती ने बहुत कोशिश की कि उसकी बहिन, जीजा को जली कटी न सुनाया करे पर वह सफल न हुई।

छोटे राम की बात सुनते ही मंजरी को अपने पति पर तरह तरह के सन्देह हुये। वह किसी और से प्रेम कर रहा होगा। इसीलिये वह भोजन के लिए घर नहीं आ रहा है। अपने पति से साफ़ साफ़ पूछ ताछ करने के लिए निकल पड़ी।

इस बीच, बड़ा माधव, अपनी ठहरने की जगह पहुँचा। वहाँ उसने देखा कि उसका नौकर, और उसका धन, सब

कि गंगा ने भी उसके प्रति ऐसा व्यवहार किया, जैसे वह उसका पति हो। गंगा, बहुत चुड़ैल थी।

जब सब अन्दर भोजन कर रहे थे तो मंजरी के असली पति छोटे माधव, और उसके नौकर, छोटे राम ने घर आकर किवाड़ खटखटाये। जब पूछा गया कि वे कौन थे तो उन्होंने कहा—छोटा माधव और छोटा राम।

"वे दोनों घर में खाना खा रहे हैं। जाने आप कौन हैं। आप तुरत जा सकते हैं।" नौकरों ने जवाब दिया। माधव को जब मालूम हुआ कि उसकी पत्नी किसी को साथ बिठाकर खाना खा रही थी, तो वह गरमा गया।

भोजन समाप्त होते ही, कोई बहाना करके बड़ा माधव और बड़ा राम, बाहर निकले। बड़े माधव को मालती तो पसन्द आई, पर उसको मंजरी का कर्कश सम्भाषण बिल्कुल पसन्द न आया। बड़े राम को गंगा भी बड़ी बुरी लगी। वे थोड़ी दूर गये थे कि एक सुनार सामने आया। उसने बड़े माधव को, छोटा माधव समझकर कहा—"माधवजी, मैं आपके लिए ही आ रहा हूँ। आपने जो हार तयार करने के लिए कहा था, वह यह है।" उसने उसके हाथ में एक सोने का हार रखा। बड़े माधव को आश्चर्य हुआ। उसने पूछा—"यह क्या है! मुझे इसे क्यों दे रहे हो!"
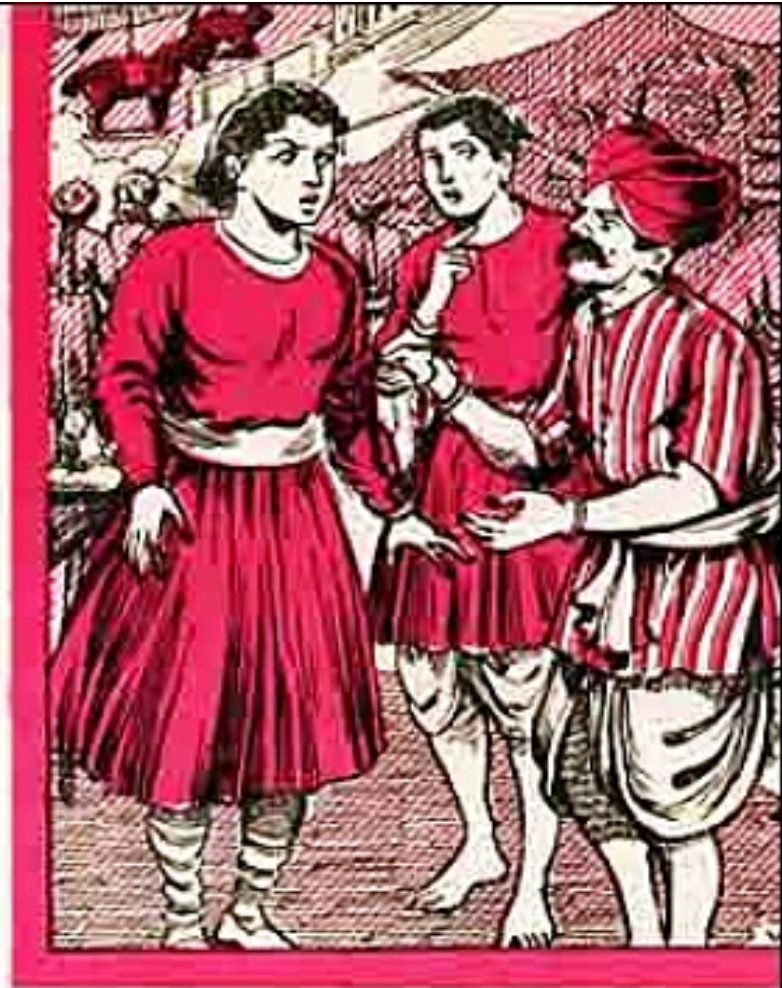
सुनार ने हँसकर कहा—"इतने में ही भूल गये! आप ही ने तो इस को बनाने के लिए कहा था। रुपये बाद में दे देना।" वह यह कह कर चला गया।

बड़े माधव ने, बड़े राम की ओर मुड़कर कहा—"राम, इस कम्बख्त शहर

में हमें एक क्षण नहीं रहना चाहिये। तुरत ठहरने की जगह जाकर, मेरा समान घाट पर पहुँचाओ। नौका लेकर चले जायेंगे।"

हार देने के कुछ देर बाद, कर्ज देने वालों ने, सुनार को पकड़कर, राजसैनिकों को सौंप दिया। उसी समय छोटा माधव वहाँ आया। उसको देखकर सुनार ने कहा—"आप ठीक समय पर भगवान की तरह आये हैं। मैंने जो हार दिया था, यदि उसके पैसे आपने दे दिये, तो मैं इनका कर्ज इन्हें देकर छूट जाऊँगा।"

छोटे माधव ने हैरान होकर पूछा—"तुमने मुझे सोने का हार कब दिया! बिल्कुल झूट कहते हो। सुनार ने हार की कितनी ही निशानियाँ बताईं पर छोटा माधव न माना कि उसने हार लिया था। यह देख सुनार ने राजसैनिकों से कहा—"मेरे पास से गहना लेकर ये अब मुकरना चाहते हैं। इन्हें भी पकड़िये।"

राजसैनिकों ने छोटे माधव को भी पकड़ लिया। वे सुनार, छोटे माधव को पकड़कर जेल ले जा रहे थे कि बड़ा

राम आया। वह अपने मालिक से यह कहने आया था कि समान घाट पर पहुँचा दिया गया था। नाव जाने के लिए तैयार थी। परन्तु छोटे माधव को उसे देखकर यह भ्रम हुआ कि वह उसका नौकर था। "अरे! घर जाकर, मालकिन से पाँच-सौ मोहरें लेकर, जल्दी आओ।"

बड़ा राम यह न जानता था कि वह व्यक्ति उसका मालिक न था। वह न जान सका कि क्यों मालिक उसे फिर उस मनहूस घर में जाने के लिए कह रहे थे। वह गुनगुनाता गया—"मालिक जो कहते हैं वह करना ही पड़ता है, क्या जिन्दगी है यह!" वह उस घर में गया, जहाँ उसने भोजन किया था।

उसके कहते कि उसके पति को राजसैनिकों ने पकड़ लिया है, मंजरी ने तुरत पाँच सौ मोहरें दे दीं। वह उन्हें लेकर आ रहा था कि उसको उसका असली मालिक बड़ा माधव दिखाई दिया। बड़े माधव को यह सब सपना-सा लग रहा था—गली में हर कोई उससे बात करता। फई ने कहा कि उनपर उसका कर्ज है। एक कपड़े की दुकानवाले ने

बुलाकर कहा—"आप के लिए ही यह रेशम का थान मंगवाया है।" उसने उसे कुछ थान दिखाये भी। यह देख, बड़े माधव को लगा कि उस नगर में लोगों का दिमाग फिरा हुआ है। औरों का तो दिमाग बिगड़ा ही बड़े राम का भी दिमाग बिगड़ गया था। क्योंकि वह उसे देखते ही चिल्लाया—"क्या राजसैनिकों ने छोड़ दिया है? कर्ज कैसे चुकाया? उसके लिए तो पैसा ला रहा हूँ।" उसने मोहरों की थैली दिखाई। बड़े माधव ने इन प्रश्नों का उत्तर न दिया। उसने आकाश की ओर देखकर कहा—"भगवान रक्षा करो, कम से कम मेरा दिमाग न बिगाड़ो!"

जब पति बहुत देर तक न आया तो मंजरी जेल गई। वहाँ उसने रुपये देकर अपने पति को छुड़वाया। छोटे माधव ने उस पर बहुत-से आरोप लगाये। उसने कहा कि भोजन के समय उसे उसने अन्दर न आने दिया था। राजसैनिकों से छुड़ाने के लिए तुरत पैसा न भेजा था। यह सब सुनकर मंजरी को लगा कि उसका पति पागल हो गया था। उसके नौकर राम ने कहा कि जो कुछ मालिक ने कहा था, वह सब ठीक था। इसलिये उसने उन दोनों के हाथ बँधवा कर, घर ले जाकर, घर के पिछवाड़े के एक काली कोठरी में उन्हें बन्द करवा दिया। और वैद्य के पास खबर भिजवाई।

थोड़ी देर बाद कुछ नौकर मंजरी के पास आये—"मालकिन! मालिक और राम, लगता है, छूटकर भाग गये हैं। बगलवाली गली में वे किसी से बातें कर रहे हैं।" यह सुनते ही, मंजरी कुछ नौकरों को साथ लेकर बगलवाली गली में गई। वहाँ बड़ा माधव, बड़ा राम, और

सुनार बातें कर रहे थे। बड़े माधव के गले में सुनार का दिया हुआ हार था।

"क्यों बाबू! तुम तो कहते थे कि तुमने हार ही न लिया था—अगर मेरी चीज़ तभी मुझे दे देते तो इतनी मुसीबतें न झेलनी पड़तीं।" सुनार कह रहा था। "मैंने क्या तुम्हें हार देने के लिए कहा था? तुम ही देकर चले गये थे। मैंने कब कहा था कि मैंने हार नहीं लिया है?" बड़ा माधव यह कह रहा था कि मंजरी ने वहाँ आकर कहा:—

"—तुम बचकर यहाँ आगये हो? हाथ बाँधकर इनको घर ले जाओ। उस राम को भी।"

यह जानकर कि कोई आफ़त आनेवाली है, बड़ा माधव और बड़ा राम, पासवाले आश्रम में भाग गये। वह आश्रम एक योगिनी का था। बाहर हलचल सुनकर वह योगिनी आई। मंजरी ने योगिनी से कहा कि उस पति की अक़्ल बिगड़ गई थी। वह उससे बचकर भागकर आया था। उसने योगिनी से उन्हें सौंपने के लिए कहा।

"क्या तुम्हारे पति की अक़्ल किसी और स्त्री को प्रेम करने के कारण चली

गई है? या वह पैसा खो बैठा है? क्या हुआ?" योगिनी ने पूछा।

"किसी और को प्रेम करने के कारण ही खराब हो गई है। मैं शुरू से ही सन्देह कर रही थी।" मंजरी ने कहा।

"यह मालूम था तो पति को क्यों नहीं रोका टोका?" योगिनी ने पूछा।

"रोका टोका क्यों नहीं—हमेशा जली कटी सुनाती ही रही। जब तक वे घर में रहते मैं अपने मुँह पर ताला नहीं लगाती। भोजन करते समय भी उन्हें

सुनाती रहती। मगर वह सब बेकार रहा—" मंजरी ने कहा।

योगिनी जान गई कि मंजरी कैसी स्त्री थी। उसने, बड़े माधव को, मंजरी को सौंपने से इनकार कर दिया।—ये बातें चल रही थीं कि राज सैनिकों के साथ धनपाल वहाँ आया। उस नगर में उसे कोई आदमी न दिखाई पड़ा, जो उसकी मदद करता।

जब वह आश्रम के पास आया, तो काली कोठरी से निकल कर छोटा माधव और छोटा राम वहाँ आये। छोटे माधव को देखते ही धनपाल ने प्रेम से पूछा—"कहो बेटा, छोटे भाई को ढूँढ़ते ढूँढ़ते यहाँ पहुँचे हो! इन राज सैनिकों ने मुझे पकड़ लिया है। पहिले हजार मोहरें देकर मुझे छुड़वाओ।"

"मैं नहीं जानता आप कौन हैं।" छोटे माधव ने कहा। कभी उसने अपने पिता को न देखा था।—"माधव क्या मैं इतना बदल गया हूँ!" जब धनपाल निशानियाँ बता रहा था, तो आश्रम के अन्दर से बड़ा माधव और बड़ा राम और योगिनी वहाँ आये।

अपने पति के समान दो व्यक्तियों को वहाँ देख मंजरी चकित हुई। फिर जो घटनाएँ घटी थीं, वे क्यों घटी थीं, उसे मालूम हो गया। यह पता चला कि योगिनी धनपाल की पत्नी ही थी। वे जुड़वें बच्चे जो छुटपन में ही बिछुड़ गये थे, इतने दिनों बाद मिले। बड़े माधव ने, राजा के यहाँ नौकरी कर ली, और मालती से शादी कर ली। उन दोनों को हिल मिल कर रहता देख, मंजरी ने भी अपने पति को जली कटी सुनाना छोड़ दिया। धनपाल भी रुद्रपुर में बस गया। वे सब सुख से रहने लगे।

झूटमूट की दावत

बगदाद शहर में, एक बूढ़ा रईस रहा करता था। उसका शहर में एक घर था। घर क्या था राजमहल-सा था। घर के सामने सुन्दर बगीचा था। घर में मखमल लगे आसन रखे थे। उसके कितने ही नौकर चाकर थे। मगर उसका मन बड़ा निर्दय था। मरे पीटे गरीबों और अनाथों को तंग करने में उसे मजा आता था। बड़ा विचित्र स्वभाव था उसका।

एक दिन वह बराण्डे में गद्दी पर बैठा था। उसके सामने एक भूखे अभागे ने झुककर सलाम किया। उस अभागे का नाम शकाशिक था। जब से उसका पिता गुज़रा था, वह भीख माँग कर गुजारा कर रहा था।

बूढ़े ने उसे देखकर, बड़े प्यार से पूछा—"क्यों बेटा, तुम क्या चाहते हो?"

"बाबू! थोड़ा दान दीजिये, पेट जला जा रहा है।" शकाशिक ने कहा।

बूढ़े ने गुस्से में कहा—"या अल्लाह, क्या कहा! मेरे रहते इस शहर में लोग भूखे मर रहे हैं! यह मैं नहीं सह सकता। मुझसे देखा नहीं जाता।"

"आप पीढ़ियों खुशहाल रहें, हुज़ूर, मैं अब यह भूख न सह पाऊँगा।" शकाशिक ने कहा।

"तब क्या है! तुम यहीं रहो, मेरे साथ बैठकर खाना खाना।"—बूढ़े ने कहा। फिर उसने एक लड़के को बुलाकर कहा कि हाथ धोने के लिए पानी तैयार रखे। फिर एक तरफ़ हटकर सुराइयों में से पानी उड़ेलकर उसने यह दिखाया कि मानों हाथ धो रहा हो—"तुम भी हाथ धोलो।" बूढ़े ने कहा। वह हाथ पोंछने का अभिनय करने लगा।

रामनारायण

शकाशिक न समझ सका यह सब अभिनय किसलिये हो रहा था। बूढ़े के परिहास का मन ही मन आनन्द लेते हुये उसने भी हाथ धोने का धीमे धीमे दिखावा किया।

"अरे, मेज पर मेजपोश बिछाकर जल्दी खाना परोसो। बिचारा यह बहुत भूखा है।" बूढ़े ने नौकरों को बुलाकर रौब से कहा।

तुरत बहुत-से नौकर भागे भागे आये। कई ने मेज पर मेजपोश बिछाने का दिखावा किया। कई ने यह दिखाया कि मानों थाल लगाये जा रहे हैं। कई ने यह दिखाया कि चीज़ें लाई जा रही हैं। शिकाशिक यद्यपि भूख से मरा जा रहा था तो भी यह सब नाटक देखता वह रह गया। वह जानता था कि रईसों के शौकों की नुक्ताचीनी करना गरीबों के लिए खतरनाक था। बिचारा क्या करता!

"बैठो भाई, शुरू करो—" कहकर बूढ़े ने ऐसा अभिनय किया, जैसे, सामने रखी चीज़ों को, अलग अलग, स्वाद चख चख कर, चबा रहा हो।

"शर्माओ मत। जितना तुम चाहो, उतना खाओ। देखा, यह रोटी कैसी है?
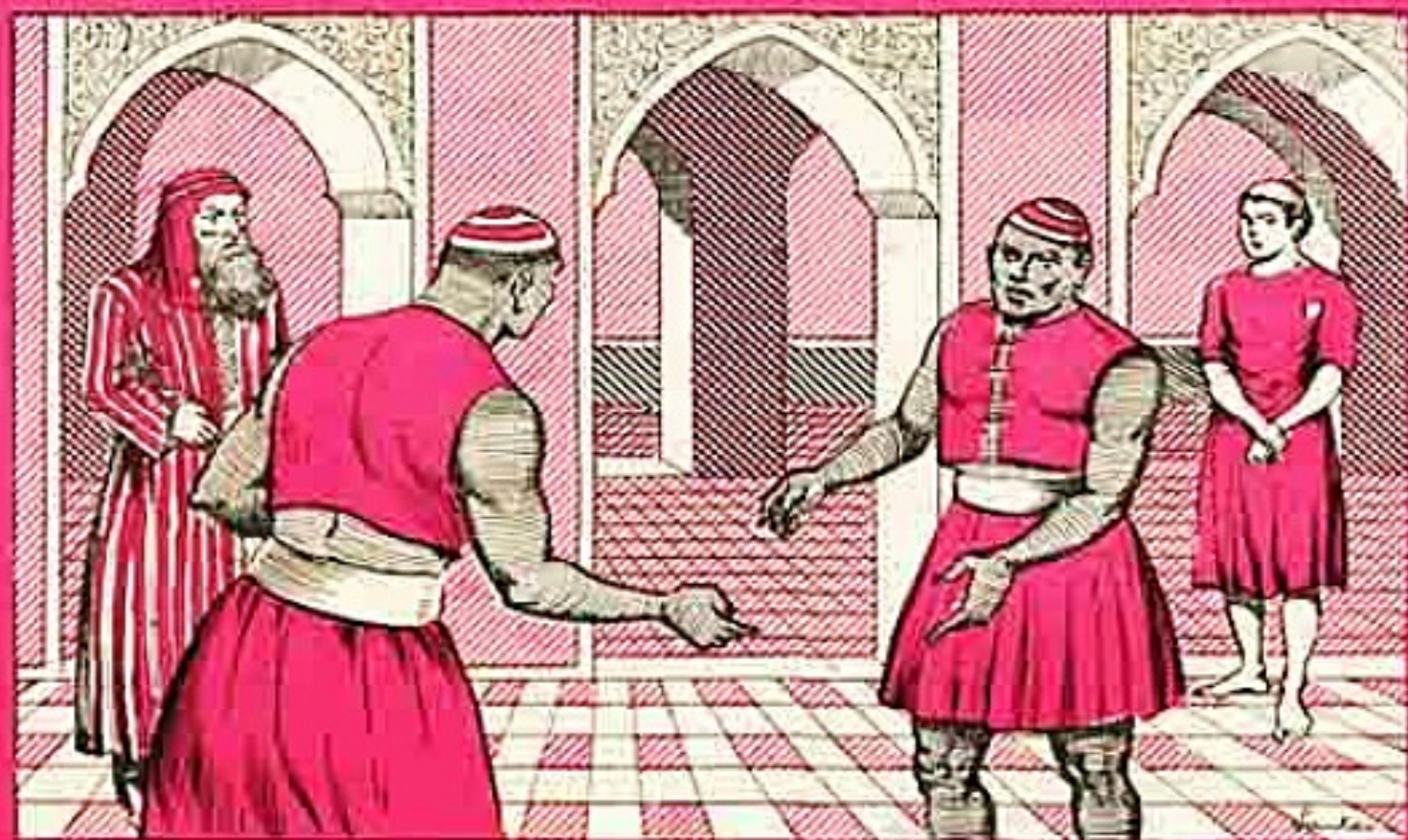
कितनी सफेद हैं।" बूढ़े ने उस विचारे अभागे से कहा।

"इतनी सफेद रोटी मैंने पहिले कभी नहीं खाई है। इसका स्वाद भी बड़े मजे का है।"—कहकर, शिकाशिक ने भी खाने का अभिनय किया।

बूढ़े ने उन रोटियों के बनानेवाले नीग्रो रसोइये की प्रशंसा की। उसने यह भी बताया कि वह उसको कितना वेतन दे रहा था। उसने सामने रखे शाक-सालनों का वर्णन किया। उनके स्वाद, और सुगन्धी की प्रशंसा की। उसका वर्णन सुनकर शिकाशिक की भूख और भी बढ़ गई।

भोजन के बाद बूढ़े ने हल्वा, मिठाइयाँ वगैरह, लाने के लिए कहा। नौकरों ने यह दिखाया, जैसे वे लाकर रख दी गई हों। बूढ़े ने भी, पहिले की तरह उनका वर्णन किया। प्रशंसा की। फिर उसने अपने अभागे अतिथि से उनका स्वाद पूछा।

उसके बाद बूढ़े ने फल व पेय लाने के लिए कहा। नौकरों ने यह दिखाया कि जैसे मेज पर तश्तरियाँ हटा दी गई हों। और शराब वगैरह लाकर रख दी गई हो।

"पीओ, बेटा, इसतरह की शरबत कहीं न मिलेगी। यह शराब देखो! यह बहुत पुरानी है। पिओ। आराम से पीओ।" उसने अपने अतिथि से कहा और स्वयं उसने ओठों पर ग्लास इस तरह रखा जैसे पी रहा हो।

तब तक तो शकाशिक, जैसे तैसे उसका अभिनय सहता आया था, मगर वह और न सह सका। वह झट से उठा, और तड़ाक से अपने हाथों से उसने उसके गले पर एक जमा दिया।

बूढ़ा गुस्से में चिल्लाया—"क्या कर रहे हो! अरे चंडाल।"

"मालिक! मैं आपका गुलाम हूँ। आपको मुझे वह तेज शराब नहीं पिलानी चाहिये थी। मुझे पीने की आदत नहीं है। इसलिए नशा चढ़ गया है।" शकाशिक ने कहा।

"यह सुन बूढ़ा, ठहाका मार कर हँसा।—"अरे वाह! मैंने इस तरह कितनों को ही सताया है। पर किसी ने भी इतनी सहनशक्ति न दिखाई, जितनी तुमने दिखाई है। तुममें जितनी खुश मिजाजी है उतनी मैंने किसी में नहीं देखी है। मुझे अच्छा सबक सिखाया है। बैठो, इस बार इसलिए मैं तुम्हारे लिए असली दावत मँगाता हूँ।"

तब सचमुच खाने की चीज़ें ही मेज पर रखी गईं। उससे पहिले जिन वस्तुओं की, बूढ़े ने प्रशंसा की थी, शकाशिक ने इस बार सचमुच उनको खाया। खाकर वह खुश भी हुआ।

उसके बाद शकाशिक कभी भूख के लिए न तड़पा। क्योंकि जब तक वह जीवित रहा—बूढ़े ने, अपने साथ, उसको दिन में दो बार भोजन खिलाया।

[१७]

[पद्ममुखी ने निश्चय कर लिया था कि जो कोई उसके पति के धनुष से बारह कुल्हाड़ियों के मूठ के छेदों से बाण निकाल देगा वह उससे विवाह करेगी। वह बूढ़े भिखारी के वेष में आये हुये अपने पति को न पहिचान सकी। इसलिये उसने उससे यह कह दिया। अगले दिन उसने अपने निश्चय के बारे में उन लोगों से भी कहा जो उसके घर में बैठे उसका खाना खा रहे थे। उसने रूपधर के धनुष और बाण मँगवा कर उनके सामने रखवाये।]

एक एक करके, बारी बारी से उन्होंने धनुष पर बाण चढ़ाने की कोशिश की, पर असफल रहे। यह देख दुर्बुद्धि ने कालू को बुलाकर कहा—"अरे, उस बाण पर चरबी लगाकर आग में सेको।" कालू ने वैसा ही किया, पर उससे कोई फायदा न हुआ।

जब वे दुष्ट धनुष पर जुटे हुये थे, सूअरों का रखवाला और ग्वाला बाहर गये, यह देख रूपधर भी बाहर गया। उसने उनको बुलाकर धीमे से कहा—"जो मैं कहूँ उसे जरा ध्यान से सुनो। अगर तुम्हारा मालिक रूपधर वापिस आये तो तुम उसकी क्या मदद करोगे? इन सब का विरोध करके उसकी तरफ से लड़ोगे? बिना कुछ छुपाये सच सच बताओ। तुम्हारा कोई कुछ न बिगाड़ेगा।"

[एक ग्रीक पुराण कथा]

"अब सन्तोष और आँसू बहाने के लिए समय नहीं है। पहिले मैं अन्दर जाऊँगा। फिर तुम दोनों एक एक करके आओ। मैं बाण माँगूँगा, वे देंगे नहीं। तब सूअरों के रखवाले को बाण लाकर देना होगा। फिर स्त्रियों के पास जाकर कहना होगा कि वे अपने कमरों में चली जायें, और अन्दर से किवाड़ बन्द कर लें। अगर, खलबली-गड़बड़ी भी हो तो उनको बाहर नहीं आना चाहिये। सुखप्राप्ति, तुम बाहर जाकर ड्योढ़ी बन्द कर दो।" रूपधर ने कहा।

फिर वे तीनों एक के बाद एक करके अन्दर गये—और अपनी अपनी जगह बैठ गये। उस समय विपुल योद्धा, धनुष पर बाण चढ़ाने की कोशिश कर रहा था। वह उसे न झुका सका। वह निराश हो, गुनगुनाने लगा।—"हम बड़े अभागे हैं, शादी की बात छोड़ो, शादी ही करनी है तो यहीं नहीं, इथाका में कितनी ही स्त्रियाँ हैं।—पर मुझे तो यह खेद है कि रूपधर की तुलना में हम कितने बलहीन हैं। हमारी पीढ़ी को देखकर आनेवाली पीढ़ी क्या सोचेगी? हम रूपधर के धनुष पर बाण भी न चढ़ा सके।"

जब उन दोनों ने शपथ ली कि वे उसकी तरफ से लड़ेंगे तो रूपधर ने उनसे कहा—"मैं ही रूपधर हूँ। तुम ही दोनों ऐसे दीख रहे हो, जो मेरे वापिस आने पर खुश हैं। अगर भगवान की कृपा से मैं अपने शत्रुओं का नाश कर सका तो तुम्हें बहुत-सा ईनाम दूँगा। भूमि दूँगा। धन दूँगा। अगर तुम्हें यह सन्देह हो कि मैं रूपधर नहीं हूँ तो यह दाग देखो।" उसने अपने जाँघ का दाग उनको दिखाया।

दोनों नौकरों ने अपने मालिक को देखकर....आनन्दाश्रु बहाये।

दुर्बुद्धि ने यह सुनकर कहा—"यों ही फालतू बातें न करो। आज पर्व का दिन है। हमें धनुष के बारे में फिक्र नहीं करनी चाहिये। उसे वहीं रहने दो। किसी और दिन उसे आजमायेंगे।"

यह बात सबको अच्छी लगी। सब के भोजन करने के बाद रूपधर ने कहा "महाशयो!—यह बाण जरा मुझे एक बार दीजिये। आप तो अब उसे आजमा ही नहीं रहे हैं। मैं देखना चाहता हूँ कि मुझ में कितनी ताकत है। पर मेरा बल तो कभी का क्षीण हो चुका है। बूढ़ा हो गया हूँ।"

सबको बड़ा गुस्सा आया। और डर लगा कि कहीं यह बूढ़ा बाण चढ़ा ही न दे। दुर्बुद्धि ने गुस्से में आकर कहा।

"अरे नीच, क्या तेरी अक्ल मारी गई है! लगता है शराब सिर तक पहुँच गई है। अगर तुमने सचमुच धनुष पर बाण चढ़ा दिया तो क्या तुम सोच रहे हो कि तुम जीते बच सकोगे!"

"दुर्बुद्धि! क्यों मेरे पुत्र के अतिथि को बाण देने से इनकार करते हो! क्या इसलिए कि वह बाण चढ़ाकर मुझ से

शादी करेगा! तुम यह क्यों सोचते हो कि उसका यह उद्देश्य है!" पद्ममुखी ने कहा।

"हमें ऐसा कोई भय नहीं है। जो बाण हम नहीं चढ़ा पाये हैं, अगर उसने कुल्हाड़ियों के मूठ के छेदों से निकाल दिया तो हमारा कितना अपमान होगा।" विपुल योद्धा ने कहा।

"यों तुम इस झमेले में क्यों पड़ती हो! अगर मैं जिसको चाहूँ वह बाण दान भी दे दूँ तो मुझे रोकनेवाला इस देश में कोई नहीं है।" धीरमति ने कहा।

इन बातों के कारण पद्ममुखी को आश्चर्य हुआ और आनन्द भी। खुश थी कि उसका लड़का लायक बन रहा था। वह अपने कमरे में चली गई।

इस बीच सूअरों का रखवाला धनुष लेकर रूपधर की ओर चला। यह देख सब जोर से चिल्लाये। उनका चिल्लाना सुन सूअरों का रखवाला डर गया और उसने नीचे बाण छोड़ दिया। परन्तु धीरमति ने तुरन्त उसको उत्साह दिलाया—"उनकी बकवास से तुम्हें क्या मतलब! तुम्हें अपना काम करना चाहिये।"

सूअरों के रखवाले ने रूपधर को धनुष देकर स्त्रियों की जगह के पास जाकर बहुकीर्ति से कहा—"स्त्रियाँ सब कमरों में चली जायें, और अन्दर से किवाड़ बन्द करलें। अगर कुछ खल-बली भी हो तो वे बाहर न निकलें।" उसे कुछ न पता लगा कि क्या बात थी। फिर भी उसने वह किया जो सूअरों के रखवाले ने कहा था। सुखप्राप्ति धीमे से बाहर खिसक गया और उसने ड्योढ़ी बन्द करदी।

इतने में रूपधर ने बाण को पकड़कर इधर उधर घुमाकर देखा। सबकी नजरें
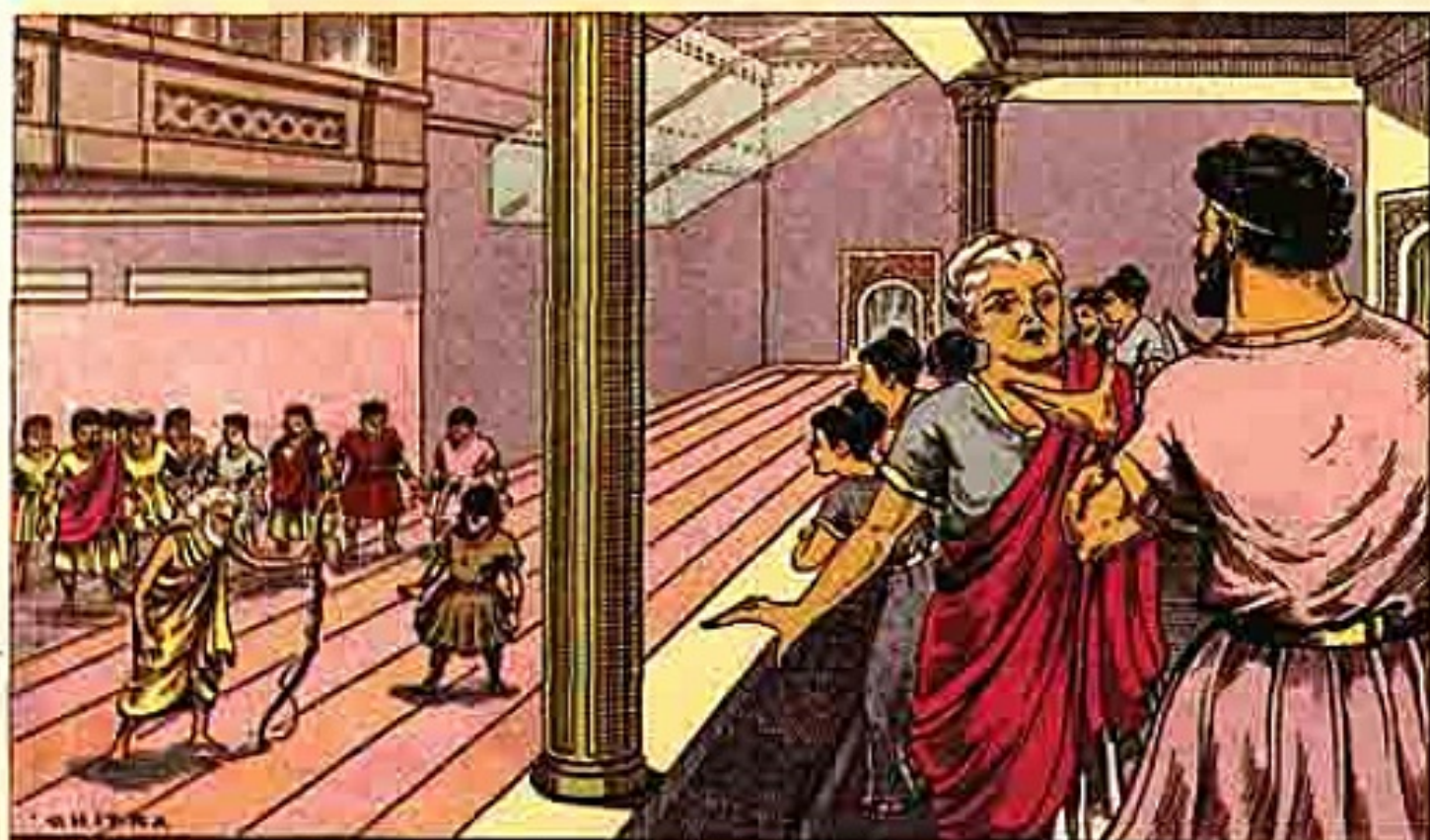
उसी पर गड़ी थीं। "लगता है यह बाण आदि, के बारे में जानता भालता है। शायद वह इस तरह के बाण तैयार करने की सोच रहा है। फिर भी देखें कि वह बाण लगाकर क्या पाता है।" उन्होंने तरह तरह की बातें सोचीं और कहीं।

रूपधर ने धनुष का निरीक्षण समाप्त करके आसानी से उस पर बाण चढ़ाकर धनुष को दायें हाथ में पकड़कर उसने बायें हाथ से धागा देखा। उसमें अच्छी आवाज हुई। सब हैरान हो गये। रूपधर ने तरकश में से चुनकर एक अच्छा बाण चढ़ाया और निशाना लगाकर उन कुल्हाड़ियों के मूठों के छेदों से पार कर दिया।

फिर उसने अपने लड़के से कहा—"बेटा, मैंने तुम्हारा अपमान न होने दिया। मैंने बाण लगाया और निशाने पर छोड़ दिया। ये बड़े लोग चाहे कुछ भी कहें, मेरा बल अभी कम नहीं हुआ है। अन्धेरा हो रहा है, इन लोगों के लिए भोजन रखवाओ। उसके बाद, नृत्य, संगीत आदि का मनोरंजन का कार्यक्रम तो है ही।"

तुरत धीरमति एक पैनी तलवार और तेज भाला लेकर अपने पिता के पास आकर

खड़ा हो गया। रूपधर ने अपने चीथड़े निकाल कर फेंक दिये। एक छलाँग में चबूतरे पर जा खड़ा हुआ। बाकी बाणों को अपने पैरों के पास घसीट कर कहा—"असली खेल तो अब शुरु हुआ है। मैं इस बार एक और निशाने पर बाण छोड़नेवाला हूँ, उसे अभी तक किसी ने नहीं मारा है।" उसने बाण चढ़ा कर दुर्बुद्धि पर छोड़ा।
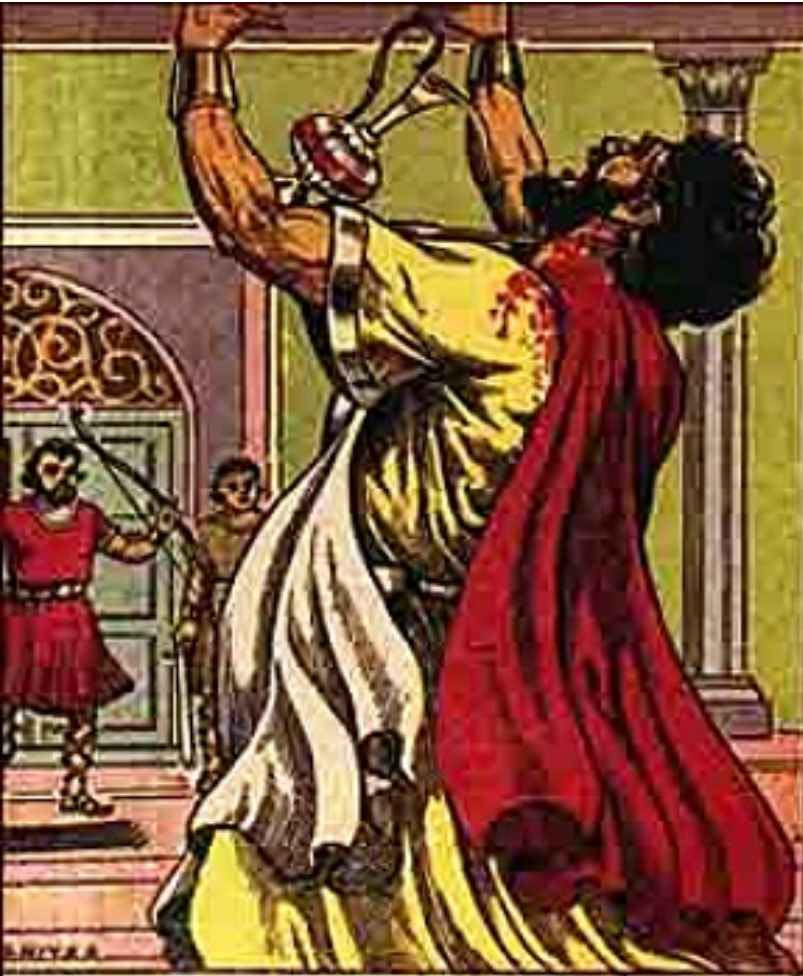
न दुर्बुद्धि ने न किसी और ने सपने में भी सोचा था कि वह बाण उसे लगेगा! दुर्बुद्धि जब एक बड़ी सुराई को दोनों हाथों से पकड़ कर शराब पी रहा था तब उसके गले में आकर बाण लगा। सुराई उसके हाथ से गिर पड़ी और उसके एक तरफ लुढ़क गई।

तुरत हाहाकार शुरु हो गया। सब अपने अपने आसनों से उठकर हथियारों के लिए दौड़े। दीवारों पर उन्हें देखा। दीवारें सब खाली थीं।

"अरे! आदमी को मारते हो। दुष्ट, देख तेरे प्राण अभी निकालते हैं।" वे चिल्लाये। तब भी वे असलियत न देख सके। उनका ख्याल था कि गल्ती से उस भिखारी ने दुर्बुद्धि पर बाण छोड़ा था।

रूपधर ने भौंहे चढ़ाकर उनसे यों कहा।

"कुत्तो! तुमने सोचा था कि मैं ट्रॉय नगर से वापिस नहीं आऊँगा। इसी भरोसे तुमने मेरे घर की सारी सम्पत्ति खा डाली। मेरी दासियों को खेल बना कर रखा। मेरे जीते जी मेरी पत्नी से शादी करने की सोची। तुम्हें न भगवान का डर है न मेरा ही डर है। यम का फन्दा अब तुम्हारे गलों पर लग रहा है।" भय के कारण किसी के मुख से आवाज न निकली।

केवल विपुल योद्धा ने कहा—"अगर तू सचमुच रूपधर है तो तेरी बातों में सचाई है। हमसे बहुत अन्याय हुआ है। इन सबका मूल कारण दुर्बुद्धि है। वह केवल तेरी पत्नी के लिये ही न आया था परन्तु तेरे लड़के को मार कर तुम्हारी सम्पत्ति भी हथियाने के उद्देश्य से आया था। हम तुम्हें हरजाना देंगे। जितनी शराब हमने पी है वह सब वापिस दे देंगे। हम आपस में चन्दा इकट्ठा करेंगे। एक एक बीस बैल देगा। तब तक तुम्हें गुस्सा करने का अधिकार है।"

"तुम लोगों द्वारा किये हुये अत्याचारों का एक ही हरजाना है। वह है तुम्हारे प्राण। तुम सबके मैं प्राण लूँगा। तुम भाग भी नहीं सकते।" रूपधर ने कहा।

विपुल योद्धा ने अपने अनुचरों से कहा—"भाइयो, लगता है इसने निश्चय कर लिया है। आओ सब मिलकर तलवार निकाल कर एक साथ हमला करें। कितनों को यह मार सकता है? अगर हमने गली में जाकर हल्ला किया तो सब भागे आयेंगे। तब वे इसकी खबर लेंगे।"

वह तलवार लेकर रूपधर पर लपका ही था कि रूपधर का बाण उसकी छाती पर लगा।

बाकी लोग भी रूपधर की ओर लपके। कुछ को धीरमति ने अपने भाले से गिरा दिया। उसने पिता से कहा—"पिता जी, आपके लिये, सुअरों के रखवाले और ग्वाले के लिए हथियार ले आता हूँ।"

"बाणों के खतम होने से पहिले ले आ।" रूपधर ने कहा। धीरमति सामान वाले कमरे में जाकर चार ढाल, आठ

भाले, चार कवच तुरत ले आया। चारों उन्हें पहिन कर दरवाजे के पास खड़े हो गये।

बाणों के खतम हो जाने के बाद रूपधर ने बाण छोड़कर भाला पकड़ा। तब तक कुछ मारे जा चुके थे। पर कुछ बाकी थे। इस समय काळू ने अपने मालिकों की सहायता की। वह पिछवाड़े के रास्ते से जाकर एक दर्जन भाले, ढ़ाल कवच सब केलिए ले आया।

यह देख रूपधर ने कहा—"धीरमति, लगता है घर की दासियाँ उनकी मदद कर रही हैं।"

"पिताजी गलती मेरी है। मैं जल्दी में सामानवाले कमरे का ताला लगाना भूल गया।" यह कहकर सूअरों के रखवाले को सामानवाले कमरे में ताला लगाने के लिए भेजा। जब दूसरी बार काळू कमरे में जा रहा था....वह सूअरों के रखवाले द्वारा पकड़ा गया।

उसके बाद दोनों पक्षों में भालों से युद्ध हुआ। सौभाग्य से शत्रुओं के भालों में से कोई भी भाला न रूपधर को लगा न धीरमति को ही। परन्तु उनके भालों के शत्रु शिकार हुये। भालों के युद्ध के बाद दोनों पक्ष हाथापाई करने लगे।

उस दिन देवता रूपधर के साथ थे। उसके सब शत्रु आखिर मारे गये। दो को उसने जान बूझकर छोड़ दिया। वे निरपराधी थे।

सारा हॉल लाशों से भर गया था। रूपधर ने बूढ़ी दायी को बुलाकर कहा—"दासियों से यह हॉल धोकर साफ करवाओ। नौकरों से कहो कि इन शवों को बाहर रखवायें।" हॉल को साफ करने के बाद उसमें धुआँ किया गया।

(अगले अंक में समाप्त)

विक्रमार्क ऊबा नहीं। वह फिर एक बार पेड़ के पास गया। पेड़ पर से शव उतार कर, कन्धे पर डाल, श्मशान की ओर पहिले की तरह मौन हो चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—

"राजा लोग विलासी होते हैं। वे हमेशा नये नये विलास चाहते रहते हैं। तुम्हारे जैसा जीवन कोई भी राजा नहीं बिताता—कई राजाओं के लिए, जो सुख प्राप्त हैं, काफ़ी नहीं होते, नये मिलते नहीं, इसलिए उन्हें बहुत व्यथा होती है। यह दिखाने के लिए तुम्हें महाराजा सत्यजीत की कहानी सुनाता हूँ। सुनो," उसने यों कहानी सुनानी शुरु की।

हस्तिनापुर के राजाओं में सत्यजीत भी एक था। चन्द्रवंश के इस राजा ने कुरु

बेताल कथाएँ

और पांचाल देशों पर बहुत समय तक राज्य किया। उसके समय में देश सुखी था। जनता में न युद्ध भय था, न चोर भय था, न अग्नि भय ही, धर्म चारों पैरों पर था। प्रजा बहुत सुखी थी। राजा के तो कहने ही क्या! इन्द्र के वैभव से भी उसका वैभव अधिक था। उसने सब तरह से सुखों का आनन्द किया। परन्तु होते होते उसके हृदय में एक विचित्र व्यथा घर करती गई। उसकी आनन्द पाने की शक्ति खतम हो गई। सब राज वैद्य मिलकर भी उसकी व्यथा दूर न कर पाये। मन्त्रियों ने उससे कहा—"महाराज, बताइये आप क्या चाहते हैं? चाहे उसको लाना कितना ही कठिन हो हम उसे लाकर आपको आनन्दित करेंगे। हमारे सामने आपको कुछ छुपाने की जरुरत नहीं है।"

राजा ने विश्वास छोड़कर कहा—"मुझे क्या देखकर आनन्दित होने के लिए कहते हो? जीवन शुष्क-सा हो गया है। मुझे किसी चीज़ में भी न्याय नहीं दिखाई देता है।"

यह जान कर कि राजा को वैराग्य हो गया है मन्त्रियों ने तत्ववेत्ताओं को बुलाकर वेदान्त पर उपदेश करवाये। परन्तु तत्ववेत्ताओं के उपदेशों से राजा और भी ऊब गया।

एक दिन राजमहल में शौनक महामुनि आया। मन्त्रियों ने उनको राजा की मनःस्थिति बताकर कहा—"स्वामी! हमारे राजा प्राप्त सुखों से असन्तुष्ट हो गये हैं। उनके लिए नयी सुख की चीज़ें बनाने के लिए हमारे पास आवश्यक शक्ति नहीं है। हमें कृपया कोई मार्ग दिखाइये।"

शौनक महामुनि ने सब सुना। सिर हिलाते हुए उसने कहा—"तुम्हारे राजा

के लिए मैं नये नये सुख दिखाऊँगा। तुम चिन्ता न करो।"

फिर उसने राजमहल में राजा को देखकर कहा—"राजा! मैं तुम्हारी थोड़ी मदद करना चाहता हूँ। आओ, महल के ऊपरवाले तुम्हारे रहस्यकक्ष में चलें।"

राजा श्रद्धापूर्वक शौनक महामुनि को अपने रहस्य गृह में ले गया।

"राजा, तुम उस दक्षिण की तरफ़ की खिड़की के पास जाकर तो देखो।" महामुनि ने कहा।

राजा ने उठकर दक्षिण की तरफ़ की खिड़की में से देखा। उसका माथा ठनका। हृदय की धड़कन यकायक तेज हो गई। उसके किले के बाहर शत्रुओं के खेमें दिखाई दिये। लाखों सैनिक जोर से चिल्लाते उसके किले की दीवारों पर चढ़ रहे थे।

राजा ने मुड़कर कहा—"स्वामी, मुझ पर सब राजा आक्रमण करने आ रहे हैं।"

"ठीक तरह देखो वे कौन हैं।" मुनि ने कहा।

राजा ने फिर खिड़की में से देखा। पर वहाँ कोई न था।

फिर उसने पूर्व की खिड़की में से देखा। ऐसा लगा जैसे यमुना में बाढ़ आ गई हो और बाढ़ की तरंगें, उसके किले की दीवारों से टकरा रही हों। पर जब उसने फिर देखा तो वहाँ कुछ न था।

फिर उसने उत्तर की खिड़की में से देखा। उसे दिखाई दिया कि सारा हस्तिनापुर जल रहा था। राजा ने डर के मारे आँखें मूँद लीं। फिर जब खोलीं तो नगर में कुछ न था।

इसी तरह राजा ने पश्चिम की खिड़की में से देखा। वह प्रदेश, जहाँ हरी फसलें

लहलहायी करती थीं मरूभूमि-सा था। उसमें कहीं कहीं पत्थर और जन्तुओं की हड्डियाँ दिखाई दीं। वह दृश्य दीखते ही राजा के आँखों से आँसू निकल पड़े। उसने आँसू पोंछकर जब फिर देखा तो वहीं फसलें, बाग-बगीचे दिखाई दिये।

राजा ने अपने आसन पर बैठकर पूछा—"स्वामी, जो दृश्य मैंने देखे हैं वे सच हैं या भ्रम ! क्या वे दृश्य कभी ऐसे थे, या कभी होने जा रहे हैं ?"

"बेटा ! जो एक बार हुआ है, वह फिर होता है। कल जो हुआ और कल जो होने जा रहा है, उसे जब हम आज देखते हैं, तो वह भ्रम लगता है। जो तुमने दृश्य देखे हैं, लगता है, उन्हें देखकर तुम दुःखी हुए हो। आराम से नहा धोकर आओ।" मुनि ने कहा।

राजा मुनि को साथ लेकर उस तालाब के पास ले गया, जहाँ वह जलक्रीड़ा किया करता था। मुनि किनारे पर बैठा रहा। राजा ने तालाब में प्रवेश किया। राजा ने सिर पानी में डुबोया ही था कि पानी कल्लोलित-सा लगा। राजा जान गया कि उसने एक समुद्र में डुबकी लगाई थी और
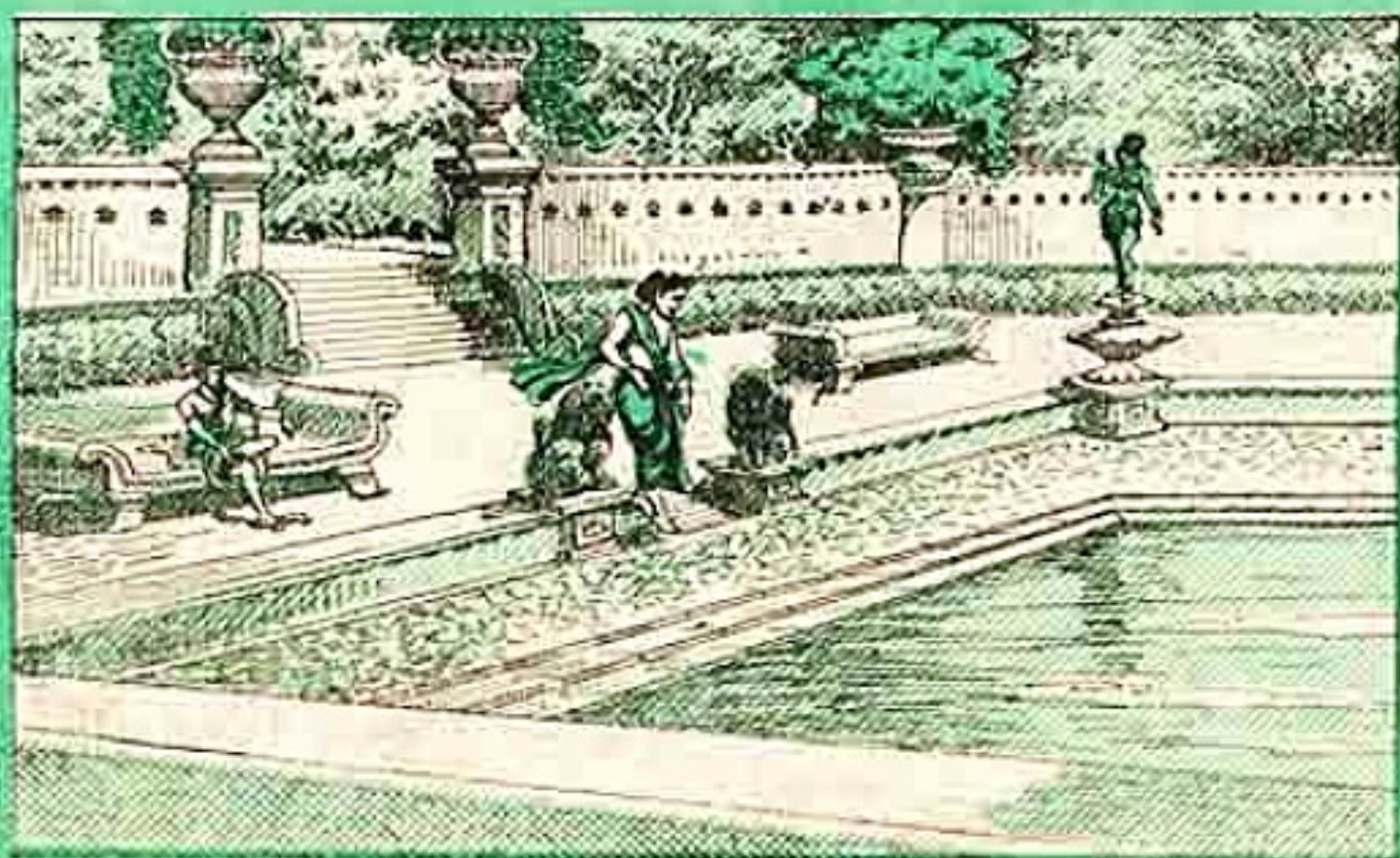
समुद्र में तूफान आ रहा था। उस समुद्र में तैरता, बड़ी बड़ी तरंगों की थपेड़ें खाता वह एक किनारे पर पहुँचा। जब वहाँ वह पहुँचा, तो गाँव के कुछ लोग जमा हो गये और उसको आश्चर्य से देखने लगे।

"क्या यों देख रहे हो! मैं हस्तिनापुर का राजा सत्यजीत हूँ। तुम सब जाओ।" उसने उनको आज्ञा दी। वे जोर जोर से हँसने लगे। उसमें से एक ने राजा के पास आकर पूछा—"सिर पर यह पीतल की टोपी क्या है? और वह साड़ी सी क्या पहिने हुए हो?" कहते हुए उन्होंने सिर पर रखे मुकट और शरीर पर ओढ़े उत्तरीय को समुद्र में फेंक दिया—"अफ़सोस कि ऐसे देश में आ पहुँचे। अगर जी तोड़ मेहनत की तो यहाँ जीलोगे। इन खुरपे फावड़ों को सिर पर रखकर हमारे साथ आओ। हम आज का काम खतम करके घर जा रहे हैं।" उसने कहा।

राजा को बहुत गुस्सा आया। पर वह कर ही क्या सकता था—"मुझे बोझ उठाना नहीं आता।" उसने कहा।

"आदमी हो और वह काम भी नहीं आता जो बैल करते हैं!" कहते हुए खुरपे

फावड़े बाँधकर उसने राजा के सिर पर रख दिये।

राजा वह बोझ ढोता उसके साथ उसके घर गया। उसने अपनी पत्नी से कहा—"देख, इस आदमी को आदमी का काम नहीं आता है। अभी बैल का काम सीख रहा है। इसे पिछवाड़े में बैलों की जगह बाँध दो और थोड़ा दाना-पानी दो।"

राजा ने उस दिन दाना-पानी खाया। अगले दिन वह बैल बन गया। जब उस किसान ने उससे बैलों के काम करवाने चाहे तो राजा जरा अड़ गया। किसान को गुस्सा आया। उसने उसको किसी कोल्हूवाले के पास बेच दिया। कोल्हूवाले ने उसे कोल्हू में जोत कर दिन रात चलाया। जब कभी बैल खड़ा होता तो उसे वह कोड़ा मारता। उस बैल को दिन में दो बार खाना खाने के लिए ही खोला जाता। इस प्रकार पाँच वर्ष बीत गये। एक दिन कोल्हू के ऊपर की छत गिर पड़ी। वह बेहोश हो गया।

जब उसे होश आई तो राजा मनुष्य के रूप में किसी और देश में था। पास ही तालाब में औरतें कपड़े धोकर नहा धो रही थीं। राजा को भूख लग रही थी।

इतने में एक व्यक्ति ने राजा के पास आकर पूछा—"तुम कौन हो? तुम इस देश के तो नहीं हो?"

"नहीं, मुझे भूख लग रही है।" राजा ने कहा।

"इस देश में जब तक पत्नी नहीं देती किसी को कोई खाना नहीं मिलता। तुम्हारी पत्नी है?" उस व्यक्ति ने पूछा।

"मेरे देश में है।" राजा ने कहा।

"तो किसी कुमारी को देखकर शादी कर ले। तुम्हें खाना मिलेगा।" उस

व्यक्ति ने कहा। "पर कैसे शादी की जाय?" राजा ने पूछा।

"जो कोई उस तालाब से नहा कर आये उन सब से पूछना क्या तुम्हारी शादी होगई या तुम क्वारी हो? समझे, सब से पूछना होगा। किसी को छोड़ना मत। अगर उन में कोई क्वारी होगी तो वह तुरन्त तुम्हारी पत्नी हो जायेगी।" यह कह कर वह व्यक्ति आगे बढ़ गया।

राजा ने वहीं खड़े होकर तालाब की ओर देखा। सोलह वर्ष की एक लड़की बगल में कलश रख कर उस तरफ़ आई।

"क्या तुम्हारी शादी हो गई है? क्या तुम अकेली हो?" राजा ने पूछा।

"पिछले साल ही शादी हुई है।" कह कर वह आगे बढ़ी। उसके पीछे पचास वर्ष की एक बूढ़ी आई। राजा ने उससे भी वही प्रश्न किया। "विवाह हो गया है, बेटा।" कह कर वह भी चली गई। उसके बाद अस्सी वर्ष वाली एक बुढ़िया लाठी टेकती टेकती आई। राजा ने हँसते हुये उससे भी वही पूछा।

"मैं अकेली हूँ, चलो चलें।" बुढ़िया ने राजा का हाथ पकड़ लिया।

राजा ने जब हाथ छुड़ाना चाहा तो वह जोर से चिल्लाई। राजा जैसे तैसे बुढ़िया की पकड़ छुड़ा कर तालाब में जा कूदा।

राजा जब पानी में से ऊपर उठा तो वह अपने ही तालाब में था। पर किनारे पर मुनि न था। वह स्नान समाप्त करके बाहर आया। परन्तु अब वह जिस किसी चीज़ को देखता तो उसे आनन्द होता, उसका घर स्वर्ग के समान था। पत्नियाँ अप्सराओं की तरह थीं। भोजन अमृत तुल्य था। नौकर-चाकर देवताओं की तरह थे।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजा, मुझे एक सन्देह है। शौनक महामुनि ने मनोव्याधि को कैसे दूर किया? उसने राजा को नये सुख दिखाने की अपेक्षा क्यों नये दुख और कष्ट दिखाये? इसका क्या कारण था? अगर तुमने जान बूझ कर उत्तर न दिया तो तुम्हारा सिर टुकड़े टुकड़े हो जायेगा।

"सुख जिन चीज़ों से मिलता है उनकी कोई सीमा नहीं है। सत्यजीत के पास सब सुख सामग्री थी। पर उनका सुख पाने के लिए उसमें शक्ति न रही थी। इसलिए उसे मनोव्याधि हो गई थी। शौनक महा मुनि यदि उसे नये सुख दिखाता तो शीघ्र वह उनसे भी ऊब जाता। इसलिए महा मुनि ने राजा को सुख अनुभव करने की शक्ति फिर से दी, यह कष्टों के सहने से ही पुनः मिलती है। इसलिए महामुनि की चिकित्सा का राजा पर असर हुआ।" विक्रमार्क ने जवाब दिया।

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य होकर पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

प्रकृति के आश्चर्य

[५]

हम तेज बहाव के अन्त के पास जब पहुँचे तो उसने छुरी उठाई। उसकी नोंक पर एक मछली थी। वह मछली चपटी थी। उसकी लम्बी पूँछ थी और पूँछ के सिरे पर कुछ था। वह मछली पूँछ से कुयेबावा को मारने की कोशिश कर रही थी।

उस लड़के ने मुझे उस मछली के बारे में बताया। वह उथले पानी में, रेत, कीचड़ में होती है। अगर किसी ने गल्ती से उसपर पैर रखा तो वह पूँछ से डँक मारती है। उस विष के कारण बहुत दर्द होता है। इन मछलियों के कारण ही वह पानी में छुरी मारता आया था।

चप्पू चला कर हम उस जगह आये जहाँ हमारा जहाज डूबा था। जैसे हम उसे छोड़ गये थे वैसा ही वह तब भी था। दुपहर हो गई थी। सूर्य ऐन ठीक सिर के ऊपर था। भूखे साथी हमें देखकर बहुत खुश हुये।

हम कुल मिलाकर सोलह मछलियाँ लाये थे। उनमें कई ऐसी थीं, जिनका भार करीब मन भर होगा। उनको आग में भूनने के लिए लड़के ने लकड़ियाँ भी रखीं।

जहाज को किनारे पर खींच कर मरम्मत करने के लिए ग्यारह गज रस्सी की जरुरत थी। जहाज से रस्सी बाँधकर खींचने से काम हो सकता था। पर रस्सी न थी। मुसाफिरों को इस विषय पर बातें करता सुन लड़के ने कहा—"भोजन के बाद रस्सी तैयार करेंगे।"

कई को यह असम्भव-सा लगा। यह जानकर उसने कहा—"जंगल में जो कुछ

तिबोर सेकल्प

मनुष्य को चाहिए वह सब है। उसका उपयोग हमें मालूम होना चाहिए, बस।"

"इस लड़के ने हमारी बहुत मदद की है। जाने वह हमसे क्या चाहता है! अरे भाई! इन मछलियों के लिए कितने दाम लोगे?" जहाज के कप्तान ने पूछा। "मुझे रुपया नहीं चाहिए, जिस किसी चीज़ की मनुष्य को जरूरत होती है। वह जंगल में है ही।" कुयेबाबा ने कहा।

यह सुन सब बड़े खुश हुये। पर जो कुछ मुसाफिर देना चाहते थे उन्होंने वह एक थैली में रख दिया ताकि जाते वक्त उस लड़के को वह दे सकें।

भोजन के बाद रस्सी बनाने का नम्बर आया। कुछ मुसाफिरों को लेकर कुयेबाबा जंगल में गया। साठ गज जाने के बाद एक पेड़ दिखाई दिया। उसके पत्ते पंखें जैसे थे। शायद वह सुपारी जाति का कोई पेड़ था। वह अधिक ऊंचा न था। लड़के ने एक पत्ता तोड़ा। उसके दस टुकड़े किये और उसे दिखाते हुये कहा—"यह लो रस्सी।" कप्तान को गुस्सा आया कि वह उनका मजाक कर रहा था।

"मैं मजाक नहीं कर रहा हूँ। इन सबको मिलाकर एक रस्सी बनाई जा सकती है। देखिये!" कहते हुये उसने उन टुकड़ों को अपनी जांघ पर रखा और रस्सी बुनने लगा। वह रस्सी बहुत मजबूत थी। थोड़ी रस्सी बुनकर उसने कप्तान को देदी।

यह रस्सी कोई नहीं तोड़ सकता—"यह रस्सी तो अच्छी है पर ग्यारह गज रस्सी बुनने के लिए कम से कम एक महीना लगेगा।" कप्तान ने कहा।

"अगर सब मिलकर काम करें तो शाम तक रस्सी तैयार हो जायेगी। इस तरह के

पेड़ ढूँढ़कर बड़े से बड़े पत्ते ढूँढ़कर लाइये। रस्सी बनाऊँगा।" कुयेबाबाने कहा।

हम सब उस तरह के पेड़ खोजने लगे। कुछ ही लोगों को वे मिले। एक एक करके कई ने कई पत्ते दिये और वह लड़का उनकी रस्सी बनाता गया। मुसाफिरों में एक नवयुवक था। उसने भी रस्सी बुनना सीख लिया। उसके बाद तीसरा एक और आदमी भी इस काम के लिए तैयार हो गया।

थोड़ी देर में, उन सब के बुनने से बीस गज की रस्सी तैयार हो गई। रस्सी इतनी मोटी और मजबूत थी कि जहाज को खींचने में काम आ सकती थी।

कुयेबाबा पर सब का आदर बढ़ गया। उस रस्सी से अगले दिन जहाज को किनारे पर खींचने का निश्चय किया गया।

अन्धेरा होते ही सब आग के पास जमा हो गये। मुसाफिरों में से एक स्त्री ने कुयेबाबा के गालों पर गुदे चक्रों के बारे में पूछा। उस लड़के ने उनके बारे में बताया।

जरजा जाति के नवयुवक और नवयुवतियाँ इन चक्रों को लगवाने के लिए उत्सुकता
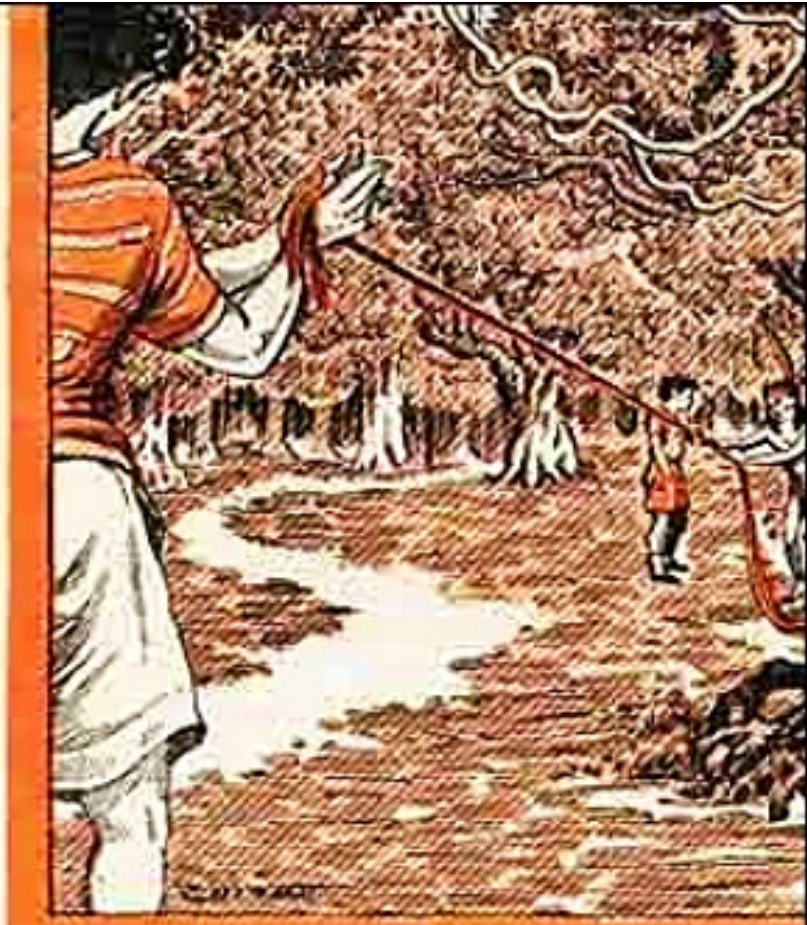
पूर्वक प्रतीक्षा करते हैं। इनके लगाये जाने पर वे बड़े समझे जाते हैं। इन चक्रोंवाला लड़का दूसरों से मिलकर शिकार खेल सकता है। नाच सकता है। जादू टोना सीख सकता है। विवाह भी कर सकता है। परन्तु ये चक्र आसानी से नहीं मिलते। वर्षों से उनका कोई सम्बन्ध नहीं। इनको पाने की आँकाक्षा रखने वालों को जंगल में अकेला घूमना फिरना पड़ता है।

इस जाति में बच्चे पाँचवे वर्ष की उम्र में ही बाण चलाना सीख जाते हैं। सातवें

वर्ष में वे स्वयं अपने बाण व धनुष बनाने लगते हैं। नवें वर्ष में शहद के छत्ते पकड़ लाते हैं। इन कामों में उनकी कोई मदद नहीं करता।

कुयेबाबा भी इसी तरह बढ़ा था। वह बड़े लोगों के साथ शिकार खेलने और मछली पकड़ने जाने लगा था। अगर किसी पशु को देखकर वह मार नहीं पाता है, तो लोग उस पर हँसते नहीं हैं, बल्कि स्वयं उसे मार देते हैं।

एक दिन उनके सरदार ने कुयेबाबा को दो सूखी लकड़ियाँ देकर कहा कि इनको रगड़कर आग तैयार करो। उसने उन्हें बहुत रगड़ा पर आग न निकली।

पिछले साल ही, उसे पन्द्रह वर्ष के बच्चों के समूह में शामिल किया गया था। साल भर वे जंगल में शिकार खेलते रहे। अन्तिम महीने में बच्चों ने बिना गुरु की सहायता के शिकार खेला। जब वे घूम करके ग्राम गये तो उनकी परीक्षा ली गई। उनसे तरह तरह के जानवरों के पग चिन्ह परखवाये गये। फिर उनको उन्हें मारकर लाने के लिए कहा गया। तैरने में, निशाना मारने में, दौड़ में, झोंपड़ी बनाने में, उनमें होड़ हुई। होड़ का परिणाम, जातिवालों ने मिलकर तैयार किया। कई को बड़ों में शामिल कर लिया गया। कई को कहा गया कि वे एक और वर्ष अभ्यास करें। जो सफल हुए थे, उनके गालों पर मान्त्रिक ने चक्र गूदे। जब चक्र गूदे जा रहे थे, तब कुयेबाबा को बहुत दर्द हुआ। उसको उसने सह लिया। जो बड़ा होना चाहता था, उसको ऊपर से रोना नहीं चाहिये था। फिर मान्त्रिक ने गूदे हुए चक्रों पर रंग लगाया। वह रंग कभी मिटता नहीं है। (अभी और है)

विचित्र बातें

१. मैं बाजार में बेल खरीदने गया। दूकानदार ने दो ढेर दिखाये। एक ढेर में बेल कुछ बड़े थे। तीन तीन अंगुल के। दूसरे ढेर में कुछ छोटे, ढाई ढाई अंगुल के। दूकानदार ने बड़े का दाम एक एक आना बताया। छोटे का तीन तीन पैसे।

बड़ों के खरीदने में फायदा है या छोटों के?

२. हमारे घर में दो घी के मर्तबान हैं। दोनों मर्तबान एक ही जैसे हैं—मगर छोटे और बड़े। जब कभी हम घी बनाते तो दोनों भर देते। हमने भोजन करने से पहिले उन दोनों में घी भर दिया और उसको जमने दिया।

पहिले किस मर्तबान में घी जमेगा? बड़े मर्तबान में या छोटे में?

३. दिल्ली से बल्लभगढ़ तक आठ स्टेशन हैं। क्या बता सकते हो कि इस फासले में सफ़र करने वाले मुसाफिर कितनी तरह के टिकट खरीदते हैं?

[उत्तर आगामी अंक में]

(गत मास के प्रश्नों के उत्तर)

१. छः विद्यार्थियों के लिए एक बेन्च पर बदल बदल कर बैठने के लिए, एक जैसा न बैठने के लिए दो साल लगेंगे। इसलिए वे जैसे पहिले दिन बैठे थे, वैसे बैठने से पहिले उनका बी. ए. समाप्त हो जायेगा।

२.
```
     415
     382
     ---
     830
   3320
  1245
  ------
  158530
```

३. 987, 652, 413

बच्चा और फूल

[कवि : शशि पाण्डेय, रायपुर]

धरती के हैं चमकीले तारे,
सुन्दरता के रखवारे।
कितने अच्छे न्यारे प्यारे,
बाड़ी के सुन्दर फूल हमारे।

तितली इन पर मँडराती है
चटक-मटक कर, भटक-भटक कर,
मीठे-मीठे गीत सुनाती है
इनको बहलाती है, इठलाती है।

बोलो बच्चे क्या तुम भी इस
बाड़ी के से फूल बनोगे
यह तो चढ़ता है मन्दिर में
तुम किन देवों के चरण चढ़ोगे।

पर फूल बनकर खिल जाना
है टेढ़ी खीर सहल मत जानो
पर जो बातें होती हैं बहुत कठिन
असम्भव उनको तुम मत मानो।

इस गुलाब के फूल सरीखा
तुमको काँटो में पलना होगा
आँधी, वर्षा, ओले धूप औ
लूह में तपना होगा, जलना होगा।

अन्दर ही अन्दर सहते रहना
इन कष्टों को, मुंह से ना कहना
इस डाली के फूल सरीखा
हँसते रहना, मुस्काते रहना।

तुड़ कर जैसे यह चढ़ जाता है
मन्दिर-मूरत के पावों में
वैसे ही चढ़ना होगा तुमको
देश की मिट्टी में, गावों में।

बन सके कहीं ऐसे, जायेगा—
फैल विश्व में तुम्हारा यश सौरभ
तुम चन्दा-सूरज से फूल बनोगे
उजियाले से भर दोगे राष्ट्र नभ

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

फरवरी १९५९ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिये। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर ता. ७, दिसंबर '५८ के अन्दर भेजनी चाहिये।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वड़पलनी :: मद्रास - २६

दिसंबर — प्रतियोगिता — फल

दिसंबर के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो : **मैं झूमूँ !**

दूसरा फ़ोटो : **तू नाचे !**

प्रेषक : श्री रामशंकर अग्रवाल, पुराना बाजार, दमोह (म. प्र.)

चित्र - कथा

एक दिन दास और वास "टाइगर" को साथ लेकर, बाग में से जा रहे थे कि झाड़ियों के पीछे से एक अजीब आवाज़ सुनाई दी। दास और वास ने सोचा कि कोई जंगली जानवर जोर जोर से चिल्ला रहा था। इतने में "टाइगर" ने चुपचाप देखा कि वह आवाज़ एक दबे भोंपें से आ रही थी। वह झट उसपर कूदा। यह देख, वह लड़का जो उस भोंपें से यह नाटक कर रहा था, चिल्लाता चिल्लाता वहाँ से दूर भाग गया।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Private Ltd., and Published by B. VENUGOPAL REDDI for Sarada Binding Works.

सबसे पहले

अमृतांजन

अमृतांजन ९ में से ७ प्रकार के दर्दों को निश्चय ही निकाल देता है। सभी शारीरिक दर्दों के लिये यह सर्वोत्तम लेप है। गत ६५ वर्षों से मशहूर यह दवा, दर्द की जगह, अन्दर काफी गहराई तक पहुँचती है और वहाँ पर के खून के दबाव को हटाती है जो दर्द का मूल-कारण होता है।

आप ही आजमाइए
थोड़ा सा बाम हथेली पर लीजिये और दर्द की जगह पर इसे मलिये। दर्द से आपको जल्द ही आराम मिलेगा।
सबसे पहले अमृतांजन का ही प्रयोग कीजिये। ९ में से ७ प्रकार के दर्दों को यह निश्चय ही निकाल देता है।

अमृतांजन लिमिटेड
मद्रास-४,
शाखाएँ: बम्बई-१ तथा कलकत्ता-१

अमृतांजन इन्हेलर से बन्द नाक खुलती है।

सफेद बालोंको श्याम बनाईये..
दिमागको ठंडक
पहुंचानेवाला
सुमधुर सुवासित
सर्वोत्तम
केशतेल.
सोल अेजन्टस फोन 51802
अेम. अेम. खंभातवाला
रायपुर · अहमदाबाद

बिन्नी का कोट्सवॉल
एक उत्तम कपड़ा जो हर मौसम के लिए आदर्श है!
"तुम कितने प्यारे और सलोने लगते हो मेरे बच्चो! और तुम्हारे ये कोट्सवॉल के कपड़े भी कितने सुन्दर हैं!"
कोट्सवॉल आपके हर पैसे की पूरी कीमत अदा करता है, क्योंकि...
यह बहुत ही होशियारी से तैयार किये जाने-वाले ऊँचे दर्जे के ऊन और सूत को वैज्ञानिक रीति से मिलाकर बनाया जाता है।
यह बहुत ही टिकाऊ होता है और हमेशा ही मुलायम बना रहता है।
यह बच्चों के लिए खास तौर से अच्छा है। इससे उनका कोमल बदन रगड़ नहीं खाता।
यह हमेशा ही आकर्षक व सुहाना लगता है और सभी मौसमों के लिए अच्छा है।
यह गारण्टी दी जाती है कि कोट्सवॉल कभी सिकुड़कर तंग नहीं होगा!
कोट्सवॉल घर पर भी धोया जा सकता है। यह कई तरह के रंगों, छपाई, चौखानों व पैजामों के लिए धारीदार डिजाइनों में मिलता है।
अपने मनपसंद कोट्सवॉल के विक्रेताओं का सूचि-पत्र मुफ्त मँगाइए।
कोट्सवॉल अपना जवाब नहीं रखता!
ज्यादा गरम कपड़े बनवाने के लिए बिन्नी का ऐंगोला लीजिए
दी बंगलौर वुलन, कॉटन एण्ड सिल्क मिल्स कं० लि० मैनेजिंग एजेण्ट्स: बिन्नी एण्ड कं० (मद्रास) लि०

Photo by P. R. Shinde

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

तू नाचे !

प्रेषक